गुरु तेगबहादुर की बानीः दार्शनिक परिप्रेक्ष्य

- मनमोहन सिंह

गुरु तेगबहादुर जी की बाणी पंद्रह रागों में गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज है, यह अंतिम श्लोक हैं जहाँ पर गुरु ग्रंथ साहिब जी की समाप्ति होती है। इस बाणी का स्वर वैराग्य पूर्ण है। इन श्लोकों के सार में सांसारिक सुखों, वासनाओं और लोभों के आकर्षण और माया की वस्तुओं से ऊपर उठने का उपदेश है, और परोपकार के लिए लगाव का उल्लेख है, जो इससे जुड़े दुखों को बदल देता है और दुनिया और आत्मा में शांति स्थापित करता है। भारतीय रस सिद्धांत की दृष्टि से गुरु तेगबहादुर की बाणी में प्रबल रस वैराग है।

'वैराग' का अर्थ है पिघलना, करुणा और दुःख की अभिव्यक्तिफ। वैराग दो संज्ञाओं 'वि' और 'राग' का शब्द है। 'वि' एक नकारात्मक संयोजन है और राग का अर्थ है प्रेम, मनोदर्शन, आनंद, अभेदता आदि। इस प्रकार वैराग्य का अर्थ है परमार्थ की जोशीली याचना, संसार की भौतिकता और यथार्थवाद की अवहेलना करना जो इन भावनाओं के प्रतिकूल है। मनुष्य का वैरागी बनना, मन को सांसारिक वस्तुओं से अलग करना और ज्ञान और भक्तिफ के मार्ग पर चलना। वैराग्य का ऐसा विचार गुरु साहिब की बाणी में स्पष्ट है।

वैराग्य की मनोवृत्ति पर, विशेषकर भारतीय सनातन में अथाह दर्शन प्राप्त होता है। वैदिक हिंदू परंपरा और बौद्ध दर्शन में, वैराग्य का एक विशेष महत्त्व है जो मन को माया मोह से मुक्तफ करने और परमार्थ की ओर बढ़ने से संबंधित है। माया भारतीय दर्शन में एक ऐसी घटना है जो शाश्वत है लेकिन उसका रूप कालातीत है। ब्रह्म शाश्वत है, जिसका अर्थ है अकाल। शंकराचार्य का ब्रह्मसूत्र अद्वैत में इस द्वंद्व को स्थापित करता है। भगवद गीता दिव्य दर्शन का व्यावहारिक रूप है।

जब वैराग्य की स्थिति जब मन धारण कर ले तो, काल के पार अर्थात् अकाल हो जाता है। ज्ञान की दृष्टि से जगत् को देखना ही दिव्य ज्ञान है। इस ज्ञान का पहला चरण वैराग्य है। इसलिए, यह मन की शुद्ध अवस्था नहीं है बल्कि दिव्य ज्ञान के मार्ग की शुरुआत है। गुरु साहिब की बाणी में दिव्य ज्ञान की अपील दृश्य जगत के सुखों और सुखों को पार करना है। इस श्रेष्ठता में वैराग्य की प्रबलता स्वाभाविक है। इस वैराग्यपूर्ण भावना के कारण गुरु साहिब के श्लोकों से मन द्रवित हो जाता है। इन श्लोकों में वैराग्य का आवेग व्यापक रूप से पाया जाता है,फ्बिखियन सो काहे रचियो, निमिख न होए उदासय् यह उदासी ही वैराग्य है। दृश्यमान सांसारिक सुख, सुविधा और वस्तुओं का त्याग। राग देवगांधारी में, गुरु साहिब कहते हैं कि सब कुछ जीवित के साथ ही व्यवहार है। जब तक प्राण होते हैं, तो माता, पिता, रिश्तेदार और पत्नी हर समय पुकारते हैंऋ लेकिन जैसे ही जीवन चला जाता है, कोई आधा घंटा भी घर में नहीं रखता है और उन्हें तुरंत बेदखल कर दिया जाता है। राग सोरठ में लिखते हैं-

इह जग मीत न देखयो कोए सगल जगत अपने सुख लगियो दुःख महि संग न कोए।

दारा मीत पूत संबंधी सगरे धन सिऊ लागे।

जब ही निर्धन देखयो नर कऊ सगु छाडि सभ भागे।

वैराग्य की भाषा में दृश्य जगत नाशवान लगता है। इससे मन खिन्न हो जाता है। वैराग्य की भाषा के सारे बिम्ब विधान सपना, बुलबुला, छाया, निमख, मृग तृष्णा, धुएँ का पहाड़, बादल, आदि के रूपकों में से अपने आप को व्यत्तफ करते हैंऋ जो एक तरह के नश्वरता और क्षण भंगुरता को प्रकट करते हैं। जो एक तरह से भ्रम और धोखे का प्रतीक हैं। जिनका अपना कोई ठोस रूप नहीं होता। गुरु ग्रंथ साहिब की पूरी बाणी में वैराग्य की भाषा व्याप्त है लेकिन गुरु तेगबहादुर की बाणी में यह अर्थ विशेष रूप से प्रबल है। वे देवगांधारी राग में लिखते हैंऋ

मृगतृष्णा जिउं जग रचना इह देखहूँ रिदै बिचारी। (436द्ध जो दिखायी दे रहा है, वह बादल की छाया की तरह मिथ्या है,

अर्थात् इसने समाप्त हो जाना है। राग गऊड़ी में गुरु साहिब बताते है-

जो दीसै सगल बिनसै जिऊ बादर की छायीं। (219द्ध

हे मनुष्य इस सच को मान ले कि सारा जगत सपने की तरह है। राग सोरठि में गुरु साहिब बताते है-

सगल जगत है जैसे सुपना बिनसत लगत न बार (633द्ध जो दिखायी दे रहा है वह बादल की छाया के समान है। राग सारंग में सपने वाले भाव को पिफर से दृढ़ करवाया है-

संग सुपने कै इहु जग जान।

बिनसै छिन मैं साचि मान। (1231द्ध

यह जगत चलायमान है, कुछ भी स्थिर नहीं है। सबकुछ जो दृश्यमान है, अस्थिर हैः

इह जग धुएँ का पहार। तै सच मानिया किह बिचार।

इस जगत की आयु उतनी ही है जितनी पानी के बुलबुले कीः जैसे जल ते बुदबुदा उपजै बिनसै नीत।

जग रचना तैसे रची कहु नानक सुन मीत। (25द्ध

भारतीय दार्शनिक परंपरा में, काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार जैसे पाँच इंद्रियों और पाँच विकारों से मुत्तफ होने के साथ साथ प्रशंसा, बदनामी, अहंकार और झूठे ढोंगों का त्याग करना आवश्यक माना गया। गीता उन्हें माया कहती है, जिससे मनुष्य जगत् के मर्म को नहीं समझता, बल्कि दृश्यमान को ही सत्य मान लेता है। इसे समझने के लिए सब कुछ त्याग, वैराग्यमयी होना आवश्यक है। एक प्रकार से यह ज्ञान प्राप्ति का प्रथम चरण है। गुरु तेगबहादुर की बाणी वैराग्य की स्थिति के वर्णन से भरी है।। जिस मन में वैराग्य की इच्छा परिपक्व नहीं हुई है, उसके लिए ध्यान और मोक्ष प्राप्ति संभव नहीं है। श्लोक 16, 14 और 15 के अनुसार सुख दुःख जिह परसे नहि लोभ मोह अभिमान। कहु नानक सुन रे मना सो मूरत भगवान। उसतति निंदिया नाहि जिह, कंचन लोह समान। हरख सोग जाके नहि बैरी मीत समान।

कहू नानक सुन रे मना मुकति ताहि ते जान।

भगवद गीता में, कृष्ण अर्जुन को उपदेश देते हैंऋ फ्हे पुरुषों में श्रेष्ठ अर्जुन! वह मनुष्य मृत्यु रहित होता है, जो दुख-सुख, हर्ष-शोक में नहीं पड़ता, बल्कि जो उनके बीच मध्य में कहीं स्थित है। ज्ञानी पुरुष समदर्शी होता है। उसका मन संकट में नहीं डगमगाता।

जिसे सुख की लालसा न हो। मन, भय और क्रोध से भरा हुआ न हो। जो मनुष्य स्थिर-बुद्धि वाला है वह विद्वान, ब्राह्मण, चंडाल, गौ, हाथी या कुत्ते में अंतर नहीं करता।

वैराग्य उत्पन्न होने का मुख्य स्रोत मृत्यु का ज्ञान है। मनुष्य काल के अधीन है। संस्कृत के 'वैराग शतक' के कवि भर्तृहरि कहते हैं— कालनायातोवयमेवजाता।

अर्थात् काल नहीं बीतता, मनुष्य बीत जाता है। गुरु तेगबहादुर साहिब की बाणी में वैराग्य का कारण प्रबल मृत्यु भय है। इसका चित्राण बार-बार विभिन्न रूपों में हुआ है। राग सोरठि और मारू की पंक्तिफयाँ इस सूत्र की भलीभांति व्याख्या करती प्रतीत होती हैंः

काल बियाल जिऊ परिउ ढौले मुख पसारे मीत।

आज कलि फुनि तोहि ग्रसि है समझि राखियो चीत।।... काल फास जब गरमै मेली तिह सुधि सभ बिसरायी।

इन श्लोकों के दार्शनिक आधार में देह की नश्वरता और विधाता की रचना की स्थिरता को परस्पर विरोधी स्थितियों में उपस्थित कर यह सिखाया जाता है कि शरीर की नश्वरता को, ईश्वरीय हुक्म में रह करऋ धैर्य, स्थिरता और संतोष के साथ स्वीकार करना आवश्यक है। जगत् की रचना को रेत की दीवार के रूप में दर्शाया गया है। इस दुनिया से सभी को जाना है। राम ने भी और रावण ने भी। यह दुनिया एक सपने की तरह है, क्योंकि यह संसार स्थिर नहीं है, अर्थात् शाश्वत नहीं है। इसलिए व्यक्तिफ को चिंता से मुक्तफ होना चाहिए। जो पैदा हुआ है वही नाशवान भी है। क्योंकि वह कालवश है। इसलिए सारे जंजाल से मनुष्य को मुक्तफ होना चाहिए। श्लोक 49, 50, 51 और 52 यहाँ प्रासंगिक हैं,

फ्जग रचना सभ झूठ है जानि लेहु रे मीत। कहु नानक थिर नह है जीऊ बालू की भीत। राम गएओ रावन गएओ जा को बहु परिवार। कहु नानक थिर किछु नहीं सुपने जिऊ संसार। चिंता ताकि कीजिये जो अनहोनी होए।

इह मारग संसार को नानक थिर नहीं कोए।

जो उपजएओ सो बिनसि है परे आज के काल।

नानक हरि गुण गाई लै छाडी सगल जंजाल।''

भारतीय दर्शन में मन को चंचल माना जाता है क्योंकि यह किसी न किसी प्रकार की आशा, इच्छा, अभीप्सा और लालसा के पीछे पड़ा रहता है। इसलिए नाशवान आशा से उत्पन्न होने वाले सुख-दुःख का भागीदार बन जाता है। यह जीवन में अस्थिरता का कारण बनता है क्योंकि वे सभी माया के रूप हैं। इससे छुटकारा पाने का उपाय है कि इनका परित्याग कर, वैराग दर्शन का जीवन व्यतीत किया जाए। गीता के फल के त्याग का दर्शन यहाँ प्रासंगिक है। अष्टांग मार्ग और बौद्ध धर्म के चार सत्य भी इसी ओर इशारा करते हैं। गुरबानी फ्आसा माही निरसय् और 'अंजन माही निरंजन' के विचारों में व्यक्तफ भावना भी इसी बात की सूचक है। गुरु तेगबहादुर साहब की बाणी में भी वही ज्ञान और रहस्य है। आशा मनसा का परित्याग और उनके बंधन से मुक्तिफ। राग सूही में, गुरु साहिबः 'जो नरु दुःख में दुःख नहीं मनाए' का अर्थ दोहराते हैंऋ

सुख दुःख जिह परसे नहीं लोभ, मोह अभिमान कहू नानक सुन रे मना सो मूरत भगवन।

अर्थात् सुख और दुःख का स्रोत आशा और इच्छा ही है। इससे छुटकारा पाने के लिए स्तुति, बदनामी, दुःख, माया का त्याग भी तृष्णा है। सुख चाहिए तो राम की शरण में जाओ। क्योंकि हे मन, मन और शरीर दुर्लभ है। सुख की खोज भी आशा की पूर्ति से निर्धारित होती है। दुःख में सब प्रयत्न व्यर्थ हो जाते हैं। इसलिए हरि के भाव में, अर्थात् हुकम में रहना अनिवार्य है,

जतन बहुत सुख के किए, दुःख को कियो न कोए। कहु नानक सुन रे मन हरि भावे सो होए।

गुरु साहिब ने मानव मन की अस्थिरता, काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार जैसे पापों के प्रति झुकाव को प्रस्तुत किया है। मन हाथी के समान मूर्ख और अनियंत्रित है। इसलिए गुरु साहिब के दार्शनिक दृष्टिकोण में मानव मन को शुद्ध करने पर बहुत जोर दिया गया है। राग गौडी अंग 213-19 के अनुसारऋ

प्राणी को हरिजस मन नहि आवै।

अहनिस मगन रहै माया मैं कहु कैसे गुण गावै। साधो इह मन गइयो न जाई।

चंचल तृस्ना संगि बसतु है याते थिर न रहाई।

भारतीय दर्शन में मन को साधने की एक लंबी परंपरा है। माण्डुक्य उपनिषद के अनुसारऋ मन इच्छाओं की कामनाओं की प्राप्ति चाहता है और बदले में कामनाओं से मुत्तफ होना भी चाहता है। गुरु गोरख नाथ से पहले चैरासी सिद्धों का तांत्रिक वज्रयान प्रचलित था। गुरु गोरख नाथ ने इसे सात्विक हठ योग में बदल दिया। गुरु गोरख के आसनों पर ध्यान की विधियों पर आधारित हठ योग आज पूरे महाद्वीप में प्रचलित हो रहा है। आज गुरु गोरख मनुष्य के अंतर-मन की खोज के लिए ध्यान की खोज के अग्रणी आविष्कारक हैं। हठ योग के योग ध्यान के अनुसार, 'ह' का अर्थ है एक सूर्य और 'ठ' का अर्थ है चंद्रमा। सूर्य और चंद्रमा के योग को हठ कहा जाता है। सूर्य का अर्थ है जीवन और चंद्रमा का अर्थ है जीवन। इन दोनों के योग से बना प्राणायाम। प्राणायाम से हवा को नियंत्रित करने का एकमात्र तरीका हठ योग है। सूरज इड़ा नाड़ी है और चन्द्रमा पिंगला है। इड़ा पिंगला नाड़ियाँ को रोक सुषुम्ना मार्ग से ही प्राणवायु को प्रवाहित करना ही हठयोग है। पतंजलि 'चित्तवृत्ति निरोधः' की बात करते हैं।

पतंजलि के अष्टांगयोग के विपरीत है, गुरु गोरखनाथ का षडांग योग। इसमें केवल छः अंगों का महत्त्व है। यम और नियम गौण हैं। इनका साधन पक्ष है हठ योग। गुरु लिखित ग्रंथ 'अवरोधशासनम्' का भी महत्त्व है। इस संदर्भ में गुरु गोरख का यह कथन कि प्राण और अपान, सूरज और चंद्र नामक शरीर में बाहरी और आंतरिक शक्तिफयों द्वारा, उन्हें प्राणायाम, आसन के साथ मिलाकर समरसता लाकर सहज समाधि सिद्ध होती है। जो कुछ पिंड में है, वह ब्रह्मांड में है-'जो पिंडे सो ब्रह्मांडे।' हठयोग साधना पिंड को केंद्र बना ब्रह्माण्ड में निहित शक्तिफयों की प्राप्ति का प्रयास है। गुरबाणी मन के बावरेपन (विक्षिप्तताद्ध को साधने का मार्ग दिखाती है:

कोई माई भूलिउ मन समझावै।

वेद पुराण साध मग सुनि करि निमख न हरि गुण गावै।

गुरु साहिब मन, माया के वश के बंधन से मुत्तफ होने के लिए हरि की शरण जाने का जाने का राग तोड़ी अंग 718 सुझाव देते हैं।

कहु नानक अब नाहि अनत गति बिनु हरि की सरनाई। भारतीय दर्शन में श्रवण परंपरा में नाम जप का बहुत महत्त्व है। अरबिंद ने अपनी पुस्तक 'थाहो आॅर्गिन वाड एराॅन स्पोचा' में वैदिक मंत्रों के उच्चारण से निकलने वाली ध्वनि तरंगों के प्रभाव को बहुत महत्त्व

दिया है। जपजी में श्रवण, मनन और ध्यान को भी प्राथमिकता दी गई है। ये तीनों मन की साधना में मदद करते हैं और नैतिक जीवन को बनाए रखने की तकनीक प्रदान करते हैं। आधुनिक पश्चिमी दर्शन में सत्य और शुद्धता के दावों की बनिस्पत प्रामाणिकता के में सर्वसम्मति की प्रबल भावना जैसी कोई चीज नहीं है। जोर्गन हैबरमास ने अपनी पुस्तक 'थाहोर ओन्ड ऊँचियो' में इस तरह के दावों को नैतिक प्रवचन के साथ जोड़ा है। नैतिक प्रवचन, जिसमें प्रतिभागी नियमों की निष्पक्षता और कर्मों के निर्देशों के लिए प्रयास करते हैं क्योंकि ये वही हैं, जो सामान्य रूप से संबंधित व्यक्तिफयों के लिए आवश्यक चिंता और सम्मान उत्पन्न करते हैं। उनके बनिस्पत नैतिक प्रवचन या तो लोगों (नैतिक-अस्तित्ववादी प्रवचनद्ध या किसी विशेष समूह या राजनीति (नैतिक-राजनीतिक प्रवचनद्ध के अच्छे जीवन से संबंधित प्रश्नों पर ध्यान केंद्रित करते हैं। परिणाम नैतिक प्रवचन, जो जीवन के इतिहास, परंपराओं और विशेष और अच्छे जीवन मूल्यों से संबंधित हैं, उन विषयों पर एक प्रकार का मजबूत और शक्तिफशाली तर्क-वितर्क प्राप्त करते हैं। व्यक्तिफयों और समूहों के संदर्भों का यह अर्थ नहीं लिया जाना चाहिए कि वे सार्वभौमिक सहमति भी उत्पन्न कर सकते हैं।

भारतीय दार्शनिक परंपरा में, नैतिकता का संबंध वैराग्य की मनोस्थिति के साथ है। वैराग्य की स्थिति मुक्तफ अवस्था है। सफल और असफल के बीच कोई अंतर नहीं है, दोनों स्थितियों को समदर्शी अर्थ में लेने का सुझाव दिया गया है। 'अंजन माही निरंजन' और 'जैस जल माही कमल निरलम मार्गई नैसाने' की स्थिति भी इसी समानता का संकेत है। क्योंकि भक्तिफ में 'अनुग्रह' की याचना होती है, 'फल' की नहीं। इसलिए साधारण फल नहीं,कर्म फल है। भक्तिफ में नदर अर्थात्् कृपा का बहुत महत्त्व है। वार मलार में गुरु अमर दास जी के अनुसार, 'नानक जिन कौ नदर करे' ...भगवान की कृपा का बहुत महत्त्वपूर्ण है।

गुरु तेगबहादुर जी की बाणी में भक्तिफ भाव प्रधान है। कई मिथहासिक और पौराणिक संदर्भों में भक्तिफ के महत्त्व पर प्रकाश डाला गया है। इन संदर्भों का मूल भारतीय वैष्णव दर्शन में है, जिसका मुख्य स्रोत महाभारत और भगवद-गीता है। इस दर्शन का सार ही भक्तिफ है, जिससे माया के बंधन टूट जाते हैं। राग मारू में यह शब्द अमग 1104 पर है,

पांचाली कऊ राज सभा मैं राम नाम सुधि आई। जा के दुःख हरिए करुनामय अपनी पैज बढाई।

जिस नर जस किरपानिधि गईयों ता कऊ भयो सहाई। कहु नानक मनहि भरोसै गहि आन सरनाई।

भारतीय दर्शन में जप के साथ-साथ भज अर्थात्् भजन का सार भी बहुत प्रबल है। भजन का रूप कीर्तन है, जिसमें भक्तफ अपने इष्ट प्रभु के गुणों की स्तुति करता है, ताकि वह उनकी कृपा का भागीदार बन सके,

गुण गोबिंद गइयो नही, जनम अकारथ कीन।

कहु नानक हरि भज मना जिह बिधि जल कऊ मीन। भजन वास्तव में प्रभु प्रेम का ही प्रतीक है। भारतीय वैष्णव परंपरा में भक्तिफ, भजन, कीर्तन और प्रेम को भगवान से मिलने का साधन बताया गया है। भक्तिफ का वर्णन विशेष रूप से गुरु तेगबहादुर के शब्दों में स्पष्ट है, जिसमें उन्हें अन्य साधनाओं के सामने उत्कृष्टता का आशीर्वाद प्राप्त है,

हरि के नाम बिना दुःख पावै।

भगति बिन सहज नह चखे गुर इह भेद बतावै। कहा भयो तीरथ ब्रत किए राम सरन नहि आवै...।

कहु नानक इह बिधि को प्राणी जीवन मुकति कहावै। भारतीय दर्शन के अनुसार जीवन का परम सार मोक्ष है। चार पुरुषार्थ-काम, अर्थ, धर्म और मोक्ष-जीवन में बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। पंचभूत जीवन के पाँच इंद्रिय विकारों से मुक्तिफ के लिए कर्म और ज्ञान मार्ग के माध्यम

से मोक्ष का मार्ग समझाया गया है। गुरबानी दर्शन में मोक्ष जीवन आदर्श की प्राप्ति है। इस उपलब्धि के लिए ज्ञान और करम मार्ग के नियम साधना, जाप, नाम, भगती सेवा और शारदा हैं। मोक्ष की सिख शब्दावली में निर्वाण, भौनिध, भवजल, पार उतरा जैसे कई शब्द हैं। गुरु तेगबहादुर जी के 'मुत्तफ' शब्द के प्रयोग का अर्थ है जीवन मुत्तफ। गुरु साहिब की बाणी में, मुत्तिफ शब्द की परिभाषा, मुत्तिफ का प्रकार, मुत्तिफ पाने के साधन और मुत्तफ या जीवन मुत्तफ की अवधारणा की जटिलता को एक परिपक्व व्यत्तिफ की सूत्र शैली में सरल और सीधे तरीके से समझाया गया है। दार्शनिक नैतिक गुणों की प्राप्ति से मोक्ष की प्राप्ति होती है। नैतिक गुणों की प्राप्ति अपने आप में मोक्ष है। निम्नलिखित दो श्लोक एक ही अर्थ की ओर इशारा करते हैं,

उसतति निंदिया नाहि जिह कंचन लूह समान।

कहु नानक सुन रे मना मुकति ताहि तै जानि।

हरख सोग जेक नाहिं बैरी मीत समान।

कहु नानक सुनि रे मना मुकति ताहि तै जानि।

गुरु तेगबहादुर जी की बाणी में ब्रह्म, जीव, जगत, माया और मुत्तिफ ये पाँच पहलू हैं। उनके दार्शनिक दृष्टिकोण में ज्ञान और भत्तिफ के नैतिक कार्यों पर अधिक बल दिया गया है। भरोसा, श्रद्धा और सत्य की टेक ही सदा सर्वदा सच्ची टेक है। इसलिए गुरु तेगबहादुर जी की बाणी में इसलिए मनो-वैराग के दर्शन पर अधिक बल दिया है। मन के विकारों से शुद्धि और भत्तिफ से नाशवान शरीर से मुत्तफ होने की बड़ी शत्तिफ मिलती है।

सन्दर्भ:

1. गुरु तेगबहादुर (बानी, ततकरा, शबद अनुक्रमणिकाद्ध, पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला, 1975
2. तरण सिंह, गुरु तेगबहादुर का जीवन, संदेश और शहादत, पंजाबी विश्वविद्यालय पटियाला, 1976
3. तारा सिंह, गुरु तेगबहादुर राग रचनावली, पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला, 1977
4. डाॅ. भजन सिंह ज्ञानी, गुरु तेगबहादुर, नेशनल बुक ट्रस्ट, भारत, 1994
5. डाॅ. मनमोहन सिंह, गुरु तेगबहादुर के दार्शनिक विचार, मनदीप प्रकाशन, दिल्ली, 1980

भारत की दशा और दिशा को बदलने के लिए
श्री गुरु तेगबहादुर जी की उपदेश यात्राएँ

प्रो. करमजीत सिंह

गुरु तेगबहादुर जी महाराज के समय भारत पर मुगलों का शासन था। बाबर के नेतृत्व में हिन्दुस्तान पर पहली बार इस जनजाति ने 1519 ई. में सूबेदार दौलत खान लोधी पर हमला किया और उसे हरा दिया, जो उस समय पंजाब में दिल्ली का सूबेदार था। मध्य

एशिया के शासक बाबर ने अंततः पानीपत की लड़ाई में यहाँ के शासक इब्राहिम लोधी को हराकर 1526 ईस्वी में भारतीय उपमहाद्वीप पर विजय प्राप्त की। अब भारत में मुगल साम्राज्य की नींव इसलिए पड़ी क्योंकि जहीरुद्दीन बाबर का उद्देश्य केवल भारत को लूटना नहीं था। उसका असली लक्ष्य इस समृद्ध देश पर कब्जा करना और अपना राज्य स्थापित करना था। बाबर सफल हुआ और देखते ही देखते बाबर के उत्तराधिकारी के नेतृत्व में यहाँ दुनिया का सबसे शक्तिफशाली साम्राज्य स्थापित हुआ। गुरु तेगबहादुर के समय में शासक औरंगजेब था, जिसके अत्याचारों की कहानियाँ आज भी लोगों के जेहन में ताजा हैं। इस देश के निवासियों ने उसके उत्पीड़न को सहना, अपने भाग्य का नसीब माना। असहनीय जुल्मों-सितम और भारी टैक्स ने लोगों का जीना दूभर कर रखा था पर, सभी विवश थे। धीरे-धीरे बाबर के राज्य का विस्तार होने लगा और बाबर की तुलना में भारत के छोटे क्षेत्रों के मालिक बनने वाले राजाओं ने इस विस्तार में अधिक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। ये सभी छोटे-छोटे राज्य एक-दूसरे से बहुत नफरत करते थे। भारत की यह भूमि टुकड़ों में बँटी हुई थी प्रत्येक टुकड़े का स्वामी किसी न किसी रूप में दूसरे की पीठ में छुरा घोंपने को तैयार रहता था। इस सब के लिए वह किसी न किसी तरह से बाबर को प्रोत्साहित करता और मदद का आश्वासन देता ताकि वह अपने पड़ोसी राज्य पर कब्जा कर सके और शाही परिवार का सफाया कर सके। इसके पीछे उनकी बुरी भावना यह थी कि बाबर कुछ समय के लिए भारत में ही रहेगा और लूट के बाद अपने देश 'खुरासान' को लौट जाएगा। उसके जाने से वह अपने पड़ोसी के राज्य पर कब्जा करके अपने राज्य का विस्तार कर सकेगा। उन्होंने स्वप्न में भी नहीं सोचा कि बाबर यहाँ लूटने के लिए नहीं बल्कि इस समृद्ध भूमि पर हमेशा के लिए अपने राज्य का झंडा फहराने आया है। बाबर इन छोटे राजाओं की चालाकी को समझ गया, परिणामस्वरूप उसने इन छोटे राज्यों को अपने पैरों के नीचे रौंद दिया और यहाँ तक कि बाबर को उसके पड़ोसी राज्य को मारने के लिए हर तरह से मदद करने वाले भी नहीं बचे। भारत के राजाओं की यह बुरी सोच निश्चित रूप से भारत की गुलामी का मुख्य कारण थी।

बाबर के बाद उसका पुत्र हुमायँु राज गद्दी पर बैठा, जो विद्वान तो था परन्तु दूरदर्शी नहीं था। परिणामस्वरूप, एक अन्य मुस्लिम सेनापति, शेर शाह सूरी ने उसके क्षेत्र पर कब्जा कर लिया और हुमायूँ को अपनी जन्मभूमि में भागना पड़ा। हालांकि शेरशाह सूरी ने बहुत कम समय तक शासन किया, पिफर भी उनके शासनकाल को 'स्वर्ण युग' के रूप में याद किया जाता है। भारत में उनका महत्त्वपूर्ण कार्य जो आज भी शेरशाह सूरी मार्ग के नाम से जाना जाता है। जिसे हमारे समय में ळज् त्वंक.1 कहा जाता है। पूरे भारत को जोड़ने वाला एक हाईवे है। हुमायँु ने अपनी जमीन से पिफर तैयारी की। चुपके से शेर शाह सूरी के सेनापति को खरीद लिया। उस पर हमला किया। शेर शाह सूरी के शासन को उखाड़ फेंका और मुगल सरकार का पुनर्निर्माण किया। हुमायँु के बाद उसका पुत्र अकबर गद्दी पर बैठा, जिसने केवल सुन्दर और दूरदर्शी दृष्टि से भारत की तकदीर ही नहीं बदली बदली बल्कि उसने भारत के लोगों के दिलों पर शासन

किया, उन्हें समान अधिकार दिए, जिससे लोगों का जीवन खुशहाल हो गया। अकबर के बाद उसका पुत्र सलीम जहाँगीर उपाधि के साथ भारत का शासक बना। जहाँगीर का पालन-पोषण एक कट्टर मुसलमान की देखरेख में हुआ। नतीजतन, उसने भारत पर कट्टरपंथी शरीयत का शासन थोप दिया। कापिफर और मोमिन दो पक्ष सामने आ गए। भारत के मूल निवासी जो अन्य धर्मों के अनुयायी थे, जहाँगीर के राज्य में कापिफर घोषित कर दिए गए। उन पर कई धार्मिक टैक्स लगाए गए, जिससे उनका जीवन दयनीय हो गया। लोग

घबराने लगे। उन्होंने भारत के मूल निवासियों के उत्पीड़न की इन्तहाँ कर दी। जहांगीर के इन अत्याचारों ने सिख धर्म को भी छुआ। जहांगीर के परदादा बाबर ने अनजाने में गुरु नानक पातशाह को रिहा करने के लिए माफी मांगी थी, लेकिन जहांगीर के आदेश पर पाँचवें गुरु पातशाह अर्जुन देव जी को लाहौर में शहीद कर दिया। नतीजतन, गुरु के अनुयायियों और मुगल बादशाहों के बीच दुश्मनी की दीवारें खड़ी हो गईं। जहाँगीर के बाद, शाहजहाँ सिंहासन पर चढ़ा और शाहजहाँ के बाद, उसके बेटे औरंगजेब, जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, गुरु तेगबहादुर के समय में औरंगजेब के नाम पर भारत के राज्य का मालिक था और औरंगजेब मुगल सम्राटों में सबसे कट्टर मुस्लिम था।।

यात्र का उद्देश्य

औरंगजेब ने अपनी तानाशाही से हिंदू समाज में हलचल मचा दी थी। लोग डर गए और उन्होंने भगवान से प्रार्थना की कि औरंगजेब का वंश नष्ट हो जाए और ऐसा दिव्य प्राणी इस धरती पर आए जो इस पापी राज्य का अंत कर दें ताकि वे अपनी धरती पर राहत की सांस ले सकें। भारत भूमि पर, दैवी-पुरुष श्री गुरु तेगबहादुर साहिब 'नानक गुरुगद्दी' पर नौवें स्वरूप में सुशोभित थे और वे पूरे वातावरण को बहुत ध्यान से और करीब से देख रहे थे। उन्होंने भारत की दशा और दिशा को बदलने का संकल्प लिया। उन्होंने भारत के लोगों के मनोबल को बढ़ाने के लिए धार्मिक तीर्थयात्र करने और जनता को यह संदेश देने का मन बना लिया कि 'भय काहू को देत नहि, न भय मानत आनि'। ऐसे समय में गुरु नानक पातशाह के उत्तराधिकारी से केवल एक ही उम्मीद की जा सकती थी कि इस संकटपूर्ण और अशांत समय में लोगों को धैर्य दें और उनका मनोबल बढ़ाएं। गुरु महाराज ने अपने परिवार और अपने सिख सेवकों के साथ सुदूर पूर्व की यात्र की। इन यात्राओं के दौरान उनके कई उद्देश्य थे। सबसे पहले, वह संगतों से मिलना चाहते थे और उन्हें दर्शन देकर सिख सिद्धांत को सुदृढ़ करना चाहते थे, जिसकी स्थापना इस धर्म के संस्थापक गुरु नानक जी महाराज ने की थी। दूसरा, वह ऊपर बताए गए लोगों का मनोबल बढ़ाना चाहता था, तीसरा, उनका मन्तव्य ऐसे काम करने का था जिससे लोगों का जीवन खुशहाल और अधिक आरामदायक हो।

गुरुजी की यात्रा

बेशक, पंजाब में वर्तमान हरियाणा में सुदूर पूर्व का सटीक मार्ग ज्ञात नहीं है कि वे कहाँ कहाँ और किन किन रास्तों से होते हुए गये। लेकिन कुछ सिख ग्रंथ जैसे साखी पोथी, सूरज प्रकाश और पंथ प्रकाश आदि में कुछ विवरण निश्चित रूप से जरुर मिल जाते हैं। बेशक इन नामित स्थानों के अलावा और भी कई गाँव, कस्बे और शहर होंगे जहाँ गुरु पातशाह के चरण पड़े होंगे लेकिन यहाँ हम उपरोत्तफ ग्रंथों के आधार पर उनकी यात्राओं को बहुत संक्षेप में बताने का प्रयास करने जा रहे हैं।

गुरु तेगबहादुर जी की यात्रा

प्रसिद्ध इतिहासकार डा॰ कृपाल सिंह के अनुसार, गुरु तेगबहादुरजी ने फ्चक्क नानकीय् की स्थापना के बाद पूर्व की ओर अपनी यात्र शुरू की। इस यात्र के पीछे गुरु महाराज का एक विशेष उद्देश्य था जिसका उल्लेख पहले ही किया जा चुका है। पंजाब में वे रोपड़ जिले के दुगरी, कोटली और घड़ूआंऋ फतेहगढ़ साहिब में नंदपुर, कलौड, रैले, बहोड, भगताना और दादूमाजरा शामिल हैंऋ जिला पटियाला के

उगाणी, टहिलपुर, सैफाबाद, बीवीपुर खुर्द, नौलखा, लंग और गुनिके, संगरूर में भवानीगढ़, मूलोवाल, गागा, मरोकड़ साहिब गुरनाऋ बरनाला में सेखा, हडीयाइया, सोहिवाल, पंढेर, ढिलवाँ मौडऋ मनसा में अलीशेर कलां, गोबिंदपुरा, जोगा, भूपाल, खिवा कलां, भीखी, खियाला कलां, कोट धर्मू, बरेडऋ भटिंडा में दमदमा साहिब, मौड आदि में स्थानों को निहाल करते हुए वर्तमान हरियाणा के जिला जींद के पिंड धमधान (जहाँ पातशाह की गिरफ्रतारी के विषय में भट्टठ वहियों और महिमा प्रकाश मिलता हैद्ध कैथल, बणी बदरपुर,सुफैल, बारना, कुरुक्षेत्रा, थानेसर से पूर्व का रुख कर लिया। गुरुजी का उद्देश्य लोगों को मुत्तफ करना, सही रास्ता दिखाना और शोषण से उनकी मुत्तिफ के लिए एक उपाय करना भी था। इस तीर्थ यात्र के दौरान, गुरु ने जहाँ भी किसी को गरीब या दुखी देखा, उन्होंने गुरु की गोलक खोल दी और करनाल के पास पहुँचते ही, उन्होंने धन से भरी थैली को एक यात्राी को दिया। उस पैसे से लोगों का उपकार करने के लिए कुएँ खुदवाए और वृक्ष लगवाए। उसी बदर या झोला की कृपा से उस नगर का नाम बदरपुर पड़ा। बदरपुर से गुरु जी कड़-माणकपुर पहुँचे, जहाँ उन्होंने एक योगी का (खाने-पीने संबंधीद्ध भ्रम दूर किया। कड़-माणकपुर, वर्तमान उत्तर प्रदेश राज्य का एक प्रमुख शहर है, हिंदू धर्म स्थान प्रयाग से लगभग 50 मील की दूरी पर गंगा के तट पर स्थित है। गुरु पातशाह ने उस स्थान पर निवास किया। उस स्थान पर मलुकदास नाम का एक वैष्णव संत था। जिसके मन में कई शंकाएँ थीं। गुरु पातशाह ने उसकी कुटिया में जाकर निवास किया और उसके सारे भ्रम दूर किये। जो उसे विचलित कर रहे थे और उसकी भत्तिफ में रूकावट बने हुए थे। मलूक दास को आशीर्वाद मिला, गुरु पातशाह का शिष्य बना और एक सिख साथी के रूप में सिख धर्म के प्रचार में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते रहे। इस मिलाप का उल्लेख सूरज प्रकाश ग्रंथ में भी मिलता हैः

चैपई

कड़े सु मानिकपुर दे राहु। गमने सतगुरु बेपरवाहु। सुनियत मलूकदास भरमायहू। संक मान महि नहि भायहु। कहयौ-बैसनो मत है मेरो। सतिगुर मा ँस अहारी होएरो।

कड़-माणकपुर से गुरु जी मथुरा, आगरा, इटावा होते हुए प्रयाग (इलाहाबादद्ध पहुँचे। इलाहाबाद इस राज्य का एक और महत्त्वपूर्ण शहर है। जिसकी आज भी भारत के सभ्य शहरों में प्रशंसा की जाती है। गुरु पातशाह के समय में इस शहर को प्रयाग के नाम से जाना जाता था। इस शहर की सुंदरता यह थी कि यह तीन नदियों गंगा, यमुना और सरस्वती का संगम था, जिसने इसे हिंदू धर्म में मुत्तिफ का प्रतीक बना दिया और धार्मिक साहित्य में त्रिवणी भी कहा। इसके ऐतिहासिक महत्व का अंदाजा इसी बात से भी लगाया जा सकता है कि भारत के सम्राट अकबर ने मध्य भारत पर नजर रखने के लिए यहाँ एक विशाल किले का निर्माण कराया था। सिख परंपरा के अनुसार, गुरु महाराज यहाँ लगभग छह महीने तक रहे। जिस स्थान पर वे स्थित थे वह एक बुजुर्ग माँ का घर था जो नानक घर की भत्तफ थी। इस स्थान की महिमा का उल्लेख कवि संतोख सिंह और अन्य लोगों ने किया हैः

जल उज्ज्वल, श्यामल बारी। सरस्वती बिदताई माझारी। पाप अनेकनि कतरनी छैनी। बड सोभा तिह होती त्रिबेनी।

अर्थात् एक तरफ तेज पानी था तो दूसरी तरफ काले रंग का जल था, उसमें सरस्वती प्रकट हो रही थीं। यह संगम अनेक पापों का नाश करने वाला है। गंगा, यमुना और सरस्वती तीनों नदियों का संगम बेहद खूबसूरत है।

दो महीने प्रयाग में रहने के बाद गुरु बनारस के लिए रवाना हो गए। बनारस के लोग गुरु नानक के समय से ही गुरु के घर के दीवाने हो गए थे और उनके आगमन पर गुरु तेगबहादुरजी का गर्मजोशी से स्वागत किया। काशी से गुरु जी सासाराम पहुँचे, जहाँ से चाचा फग्गू

ने अपनी हवेली के दरवाजे इतने बड़े कर दिए थे कि जब गुरु जी सासाराम आए तो वे घोड़े से उतरे बिना ही हवेली में प्रवेश कर सकें। दरअसल गुरु जी सासाराम अपने सिक्ख की मनोकामना पूरी करने ही गए थे। सासराम से गुरु जी गया पहुँचे।

यह शहर गंगा के किनारे स्थित होने के कारण हिंदुओं के लिए बहुत पवित्र माना जाता है। अपने मृत पूर्वजों की मुक्ति के लिए हिंदू इस स्थान पर 'पिंडदान' करने आते थे। दरअसल, यह पुजारियों द्वारा आम लोगों की लूट का आवरण था और यह लूट सदियों से चली आ रही थी। गुरु पातशाह की महिमा देखकर पांडे ने गुरु पातशाह से उत्साह से मुलाकात की। उनके मन में यह ढोंग था कि वे गुरु पातशाह को अपने भ्रम में फँसा लेंगे और उन्हें अच्छी तरह से लूट लेंगे। गुरु पातशाह ने मुस्कुराते हुए पंडितों के साथ एक प्रवचन किया और उनका झूठ उजागर किया और लोगों को समझाया कि मोक्ष का एकमात्र तरीका नाम सिमरन है। जब पंडितों ने अपना गुस्सा व्यक्त किया, तो गुरु पातशाह के आदेश पर, औरंगजेब के सेनापति राजा राम सिंह ने पंडितों को निष्कासित कर दिया और कहा कि अगर उन्होंने पिफर से अपने पाखंड से लोगों को लूटने की कोशिश की, तो उन्हें कड़ी सजा दी जाएगी। पंडितों ने डर के मारे पत्र पढ़ा। जिस स्थान पर पंडितों से परामर्श किया गया था, वहाँ अब एक सुंदर गुरुद्वारा बनाया जा रहा है। गया से, गुरु पातशाह का मुख अब पटना की ओर था, जो अब 'पटना साहिब' के रूप में प्रतिष्ठित है, और यहाँ पर सिखों का तख्त सुशोभित है। ध्यान दें कि पटना वर्तमान में बिहार राज्य की राजधानी है और भारत के सबसे पुराने शहरों में से एक है। पुराने दिनों में उन्हें 'पाटलिपुत्रा' के नाम से जाना जाता था। गंगा और गंडक नदियों का संगम इस शहर के बहुत करीब है। गुरु महाराज के समय यह शहर राजा फतेह सिंह मैनी का था और उनकी गिनती गुरु नानक के घर के अनुयायियों में होती है। ऐसा माना जाता है कि जब मैनी को गुरु महाराज के पटना आने की खबर मिली तो वह अपने परिवार के साथ गुरु पातशाह के स्वागत के लिए दौड़ पड़े। गुरु पातसाह दो महीने से अधिक समय तक पटना साहिब में रहे और बंगाल की यात्र करने के लिए परिवार को यहाँ छोड़ दिया। यहीं पर बाल गोबिंद जी का प्रकाश 1666 ई.में होता है, जहाँ उनकी याद में अनेक गुरुद्वारा साहिब सुशोभित हैं। इनमें हरिमंदिर साहिब पटना, गुरुद्वारा गौघाट,

गुरुद्वारा गुरु दा बाग, गुरुद्वारा गोबिंद घाट, गुरुद्वारा मैनी संगत साहिब आदि प्रमुख हैं।

आज भी बड़ी संख्या में गुरु महाराज के बिहारी सिख बिहार के उन स्थानों पर उन्हें श्रद्धांजलि देते हैं और उनकी यादों को संजोते हैं जो उन्हें समय-समय पर उनकी यात्र के दौरान गुरु महाराज द्वारा दी गई थीं। हैरानी की बात यह है कि कई गाँवों में एक भी सरूप धारी सिख नहीं है बल्कि गुरु ग्रंथ साहिब जी के हाथ से लिखे सरूपों की मौजूदगी इस बात की ओर इशारा करती है। वह गुरु जी अपनी

यात्र के दौरान यहाँ अपने आशीर्वाद से आगे बढ़ते थे। ये बिहारी सहजधारी बड़ी श्रद्धा के साथ उन पवित्र ग्रंथों की देखभाल करते हैं। पटना साहिब से गुरु पातशाह की अगली दिशा ढाका की ओर थी। वह बाड कस्बे शहर से गुजरते हुए मंगेर पहुँचे। मंगेर का स्थान उनकी स्मृति में एक सुंदर गुरुद्वारा से सुशोभित है। इसकी पुष्टि कवि संतोख सिंह के शब्दों से होती हैः

हुते मुंगेर नगर इक भारे। बसहिं बृंद नर गंग किनारे।। श्री सतिगुरु तहि उतरे जाहि। संगति सुनि आई समुदायि।

मंगर से भागलपुर, कंतनगर, राजमहल और मालदा होते हुए गुरु महाराज ढाका पहुँचे। गुरु पातशाह की याद में ढाका में सुंदर गुरुद्वारा सुशोभित हैं। ढाका में ही गुरुजी को मिर्जा राजा जयसिंह के पुत्र राम सिंह से मिले, और कामरूप के अभियान में मदद के लिए गुरु से अनुरोध किया। यद्यपि गुरु जी ने एक सशस्त्र योद्धा के बजाय शांति और सुलह के पैगंबर के रूप में असम अभियान में भाग लिया, लेकिन वे दो या तीन आधारों पर राजा राम सिंह के साथ असम जाने के लिए सहमत हुए। पहला यह था कि राजा राम सिंह और उनके पिता, मिर्जा राजा जयसिंह गुरु हरकृष्ण द्वारा दिल्ली बुलाए जाने के समय से गुरुघर के श्रद्धालु बने हुए थे, और गुरु तेगबहादुर

को राजा राम सिंह से बहुत प्यार था। दूसरे, राजा राम सिंह को औरंगजेब द्वारा किसी तरह उन्हें दंडित करने के लिए असम में एक अभियान पर भेजा गया था, क्योंकि राजा राम सिंह की हिरासत से शिवाजी बच कर निकल गए थे। औरंगजेब को राजा राम सिंह के बारे में कुछ संदेह था, पहले उसे पदावनत किया और बाद में उसे असम के लिए एक अभियान पर जाने का आदेश दिया। असम अभियान का नेतृत्व बहुत कठिन था। कामरूप की घुमावदार कठिन पहाड़ियाँ, बाढ़ का मैदान और बिफरे नदी, और उससे भी अधिक, राजा राम सिंह को उनके शुभचिंतकों ने असम की भयंकर जादूगरनियों के भयानक जादू से भयभीत कर दिया था। इसलिए राजा राम सिंह अपने साथ कई मुस्लिम फकीरों को ले गए। उसने गुरु से अपने साथ चलने की विनती की। हो सकता है कि गुरु जी इन कारणों से राजा राम सिंह के साथ असम न भी जाते, लेकिन एक ओर उन्होंने पहले ही असमिया प्रदेशों (धुबरी, आदिद्ध में जाने का मन बना लिया था, जो गुरु नानक जी द्वारा आशीर्वाद प्राप्त था, दूसरी ओर मुगल फौजदार राजा रामसिंह और कामरूप के राजाओं के बीच शांति स्थापित करने के आदर्श के साथ कामरूप जाने के लिए सहमत हुए। कामरूप में, गुरु ने मुगलों और कामरूप राजा के बीच एक समझौता भी किया। कुछ समय असम में रहने के बाद, उन्होंने जगन्नाथ पुरी का भी दौरा किया लेकिन औरंगजेब तेजी से हिंदुओं पर हमला कर रहा था और कई मंदिरों को ध्वस्त कर रहा था। इसलिए गुरु ने पंजाब जाने का मन बना लिया और 1671 ई। में साहिबजादा गोबिंद राय और अपने परिवार को पटना से अपने साथ लेकर आनंदपुर साहिब पहुँचे।

आनंदपुर साहिब पहुँचकर, उन्होंने साहिबजादा गोबिंद राय की बहुआयामी शिक्षा और आसन्न संकट को ध्यान में रखते हुए अपने सभी सिखों को शस्त्र और शास्त्र दोनों में कुशल होने की व्यवस्था की। उस समय पंजाब में धार्मिक जागृति की आवश्यकता थी, इसलिए गुरु ने लोगों का मनोबल बढ़ाने और धर्म का प्रचार करने के लिए पंजाब और मालवा के गाँवों का दौरा किया। आनंदपुर साहिब से चलकर वह कीरतपुर, रोपड़, दादूमाजरा, बस्सी पठान, नौ लाखा, उगालिया, टहिलपुर, सैफाबाद आदि कई गाँवों से होते हुए मूलोवाल पहुँचे। ग्रामीणों ने बताया कि कुएँ का पानी खारा है। गुरु ने स्वयं जल पीकर उस जल को अमृत के समान मीठा बनाया और साथ ही चैधरी जवंदा का अभिमान भी तोड़ा। इसके बाद हडिया गाँव में लोगों की जाति-पाती के भ्रम को दूर करने के लिए उन्होंने

एक तालाब में स्नान किया और सभी को स्नान करने के लिए प्रेरित किया और भक्तफों के कष्टों को दूर किया। हडिया से चलने के बाद गुरु ढीलवाँ किया। ढिलवाँ गाँव में बेहद कमजोर और गरीब ब्राह्मण रहते थे। गुरु पातशाह ने उनकी मदद की ताकि वे अपना जीवन अच्छे से जी सकें। तब गुरु जी लोगों का उद्धार करते हुए भिखी गाँव पहुँचे। वहन का एक सरदार देसू जी जोकि एक सरवर का चेला थाऋ उसका उद्धार किया। इसी प्रकार गुरु जी बठिंडा के गावों से होते हुए, बछौआना, धमधान गाँवों से गुजरते हुए मालवे की यात्र पूरी की और लोगों का आध्यात्मिक रूप से उद्धार किया और गरीबों और जरूरतमंदों को आर्थिक सहायता प्रदान की।

गुरु नानक देव जी ने लोगों के मन को जगाने और अंधविश्वास को दूर करने के लिए चार उदासियाँ (यात्राएँद्ध की-वे खुद पैदल ही लोगों के पास गए। सुनने में आता है कि प्यासे अपनी प्यास बुझाने के लिए कुएँ पर आते हैं लेकिन गुरु नानक खुद प्यास बुझाने के लिए प्यासे के पास गए।

अंत में यह कहना उचित होगा कि गुरु तेगबहादुर ने गुरु नानक की शिक्षाओं के प्रसार और प्रचार के लिए यात्राएँ कीं। तीर्थयात्र का उद्देश्य लोगों का भला करना, उन्हें अंधविश्वास से मुक्तफ करना, उनके बीच की खाई को पाटना, निर्भयता और शत्रा ुता की अवधारणा को मजबूत करना, शोषण से मुक्तिफ का संदर्भ बनाना आदि था। उन्होंने चार अवधारणाओं को समेकित किया जो उनके द्वारा रचित 59 छंदों में दर्ज हैं।

1. भय न करे

गुरु 16वें श्लोक में कहते हैंः

भै काहू को देत नहि, नहि भै मानत आन।।

कहु नानक सुनि रे मना गियानी ताहि बखानि।। 1।।

अर्थः जो मनुष्य किसी को नहीं डराता और न किसी से डरता

या डराता है-उसे ज्ञानी अर्थात् आध्यात्मिक जीवन का ज्ञान रखने

वाला माना जाना चाहिए।

2. चिंता न करें

श्लोक 51 में गुरु कहते हैंः

चिंता ताकि कीजिए जो अनहोनी होए।।

इहु मारग संसार को नानक थिर नही कोई।।51।।

अर्थः सारा संसार नाशवान है, जिसका जन्म हुआ है, उसे एक दिन मरना ही है। सबसे बड़ी चिंता मृत्यु है। गुरु जी समझाते हैं कि मृत्यु की चिंता भी अनावश्यक है और इसे स्वीकार किया जाना चाहिए और सतगुरु को साक्षी मानकर धर्म के अनुसार सच्चे कर्म करने चाहिए।

3. दुःख के समय प्रार्थना करें

श्लोक 53 में गुरु कहते हैंः

बल छुटकियो बंधन प्रे कछु न होत उपाई।।

कहू नानक अब अउट हरि गज जिऊ होत सहाई।।53।।

अर्थः जब शत्तिफ चली जाए और आप हर जगह से निराश हो जाएँ, कोई उपाय काम न करे तो भगवान से प्रार्थना करें तब गुरु जी प्राचीन साखी को उद्धृत करते हुए कहते हैं कि जिस तरह हाथी की भगवान ने मदद की, वह हर तरह से आपकी कठिनाई में मदद करेगा।

4. खुशी के समय में धन्यवाद

पद 54 में गुरु कहते हैंः

बल होआ बंधन छुटे सभ किछु होत उपाई।।

नानक सभ किछु तुमरै हाथ में तुम ही होत सहाई।।

भावार्थ: जब बल आये, सब सुख आये, सारी कठिनाइयाँ, बंधन समाप्त हो, तब ईश्वर का धन्यवाद करो क्योंकि तुममें कोई अभिमान नहीं है कि मैंने कुछ हासिल किया है-जो कुछ भी आपको मिलता है वह उसका (ईश्वरद्ध ही आशीर्वाद है।

आधुनिक संदर्भ में सिख गुरुओं के शैक्षणिक विचारों की सार्थकता

डाॅ. अमृत कौर रैना

कुछ महानुभाव, संत, महात्मा, लेखक, साहित्यकार, शिक्षा शास्त्राी ऐसे होते हैं जो अपनी महान धार्मिक साहित्यिक, शैक्षणिक देन के कारण अपने पद चिर्ोिंं को स्थाई रूप से समय के धरातल पर छोड़ जाते हैं जो सदैव अंधेरे में भटकती मानवता के लिए प्रकाश स्तंभ का कार्य करते हैं। ऐसे ही महान व्यत्तिफत्व के स्वामी थे गुरु साहिबानऋ जिनकी बाणी गुरु ग्रंथ साहिब में संकलित होकर शब्द गुरु का रूप धारण कर आधुनिक युग में भी मानवता का पथ प्रदर्शन कर रही है। केवल भारत में ही नहीं विदेशी विद्वान भी इसकी शिक्षा से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सके। अर्नाल्ड टायनबी1 के अनुसार श्री गुरु ग्रंथ साहिब संपूर्ण मानवता का सार्वभौमिक आध्यात्मिक

खजाना है जिसका संदेश अधिक से अधिक लोगों तक पहुँचाना चाहिए ताकि सिखों के अतिरित्तफ संसार के लोग भी इसके अध्ययन से लाभ उठा सकें। एच.एल. ब्राडशा2 सिख धर्म को नए युग का धर्म कहता है। (ंिपजी व िदमू ंहमेद्ध उनके अनुसार सिख धर्म एक सार्वभौमिक, सर्वकालिक धर्म है जिसमें संपूर्ण मानवता के लिए धर्म का सार है। आधुनिक अंतरिक्ष युग में मनुष्य के लिए यह एक दैवी वरदान है क्योंकि आधुनिक युग में मनुष्य की समस्याओं का उत्तर इसमें है।

डोरथी फील्ड3 के अनुसार संसार के धर्मों में सिख धर्म का एक विशिष्ट स्थान है क्योंकि यह एक क्रियात्मक धर्म है जिसने अपने प्रयोगात्मक (चतंहउंजपब पद ंचचतवंबीद्ध दृष्टिकोण के कारण बहुत कम समय में एक कौम का निर्माण किया। इसने निम्न वर्ग के साधारण अछूत लोगों को वफादार वीर योद्धाओं में बदल दिया। यह एक चमत्कार से कम नहीं। अपने लेख आधुनिक युग में गुरु नानक दर्शन की सार्थकता- (त्मसमअंदबम व िछंदंाश्े च्ीपसवेवचील पद जीम डवकमतद ंहमद्ध में डाॅ. रोनाल्ड दवे4 कहता है कि, आधुनिक युग में गुरु नानक देव जी की शिक्षाओं की विशेष सार्थकता है। उन्होंने संगत और पंगत के द्वारा ऊँच-नीच, अमीर-गरीब, जाती-पांति के भिन्न भेद को मिटाकर मानवीय एकता के धार्मिक सारहीन दिखावे के कर्मकांडों से ऊपर उठकर सच्चे नैतिक आध्यात्मिक धर्म का स्वरूप बताया। उन्होंने धार्मिक कत्र्तव्यों से विमुख न होकर सांसारिक कर्तव्यों को आध्यात्मिक स्वरूप प्रदान कर सांसारिक कर्तव्यों में से प्रभु को खोजने का उपदेश दिया।

अब प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि सार्वभौमिक मूल्यों पर आधारित गुरु साहिबान की शैक्षणिक प्रणाली हमारे युग के अनुकूल तो थी ही आधुनिक युग में भी इसकी सार्थकता है या नहीं। आधुनिक युग में शिक्षा को विशाल अर्थों में दिया जा रहा है। लेकिन परीक्षाएँ पास करना, डिग्रियाँ प्राप्त करना शिक्षा नहीं है अपितु व्यत्तिफत्व के संपूर्ण चतुर्मुखी आध्यात्मिक, बौद्धिक, सामाजिक, औद्योगिक, शारीरिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक विकास की संपूर्ण प्रक्रिया को शिक्षा माना जा रहा है। भारत सरकार की ओर से नियुत्तफ कोठारी5 कमीशन (1964-66द्ध के अनुसार शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य चरित्र निर्माण के द्वारा बढ़िया नागरिक तैयार करना, उसमें राष्ट्रीय एकता की भावना का संचार करना, किसी अच्छे उद्योग की शिक्षा द्वारा आर्थिक तौर पर आत्मनिर्भर बनाकर अपने देश के आर्थिक विकास में योगदान देना, उसका कलात्मक, सौन्दर्यात्मक, सांस्कृतिक व्यत्तिफत्व का विकास कर उसे जीवन का भावनात्मक आनंद उठाने के योग्य बनाना, ज्ञान प्रदान कर उसमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण का निर्माण कर उसमें आधुनिकीकरण का विकास करना है। अब प्रश्न यह उत्पन्न

होता है कि सर्वसाधारण जनता को शिक्षित करने के लिए गुरु साहिबान ने शिक्षा के किन महत्त्वपूर्ण तत्वों पर बल दिया और आधुनिक संदर्भ में वे कितने सार्थक हैं।

1. शिक्षा आध्यात्मिक नैतिक विकास के लिएः भारत की आधुनिक शिक्षा प्रणाली में आध्यात्मिक, धार्मिक, नैतिक मूल्यों का अभाव अनुभव किया जा रहा है। आध्यात्मिक, बौद्धिक, चारित्रिक निर्माण की अपेक्षा परीक्षाएँ पास करना और डिग्रियाँ प्राप्त करना शिक्षा का मुख्य उद्देश्य बन गया है। आज का मनुष्य अर्थ और काम का पुजारी बन दौलत के अंबार इकट्ठ़े करने में लगा है चाहे इसके लिए रिश्वतखोरी, शोषण, धोखा यहाँ तक कि खाने की वस्तुओं में मिलावट ही क्यों न करनी पड़े। कवि वड्र्सवर्थ के अनुसार धन पैदा करने और खर्च करने में हम अपनी शत्तिफयों का ह्रास कर रहे हैं। धन और शत्तिफ की इस पूजा को भौतिकवादी मूल्यों को आध्यात्मिक आधार, उच्च आदर्शों और नैतिक मूल्यों से बदलना होगा। इस दिशा में गुरुओं का शिक्षा दर्शन जो आध्यात्मिक, नैतिक मूल्यों पर आधारित है हमारी सहायता कर सकता है। उन्होंने श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बाणी के अध्ययन, अध्यापन, गायन, मनन, चिंतन आदि को अपने शिष्यों की दैनिक दिनचर्या का अविभाज्य अंग बनाकर उसके आध्यात्मिक नैतिक जीवन के विकास का प्रयास किया। उनके अनुसार शिक्षा वह अमृतदायिनी, कल्याणी शत्तिफ है जो आत्मानुभव, आत्मसाक्षात्कार, विद्यया{मृतमश्नुते (ईशावास्योपनिषद्।।द्ध की तरह 'मन तूं ज्योति सरूपु है आपणा मूलु पछाणु' (म.3 पृ. 441द्ध पर बल देते हुए शिक्षा को एक साधना, तपस्या मानते हैं। 'बिदिआ तपुजोगु प्रभ धियानु।। गिआनु स्रेसट ऊतम इसनानु।।' (म. पृ. 296द्ध उनके अनुसार वास्तविक शिक्षक वह है जो अपने मन की संपूर्ण शत्तिफयों को विकसित कर अध्यात्मिक विकास में भी सहायक सिद्ध होता है।

शुभ गुणों का जीवन में विकास, नैतिक गुणों पर आचरण प्रभु की सच्ची पूजा है। सत्य महान है पर सच्चा जीवन उससे भी महान है। वास्तविक ज्ञान जीवन में उच्च गुणों के विकास द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। 'गुण वीचारे गिआनी सोइ।। गुण महि गिआनु परापति होइ।।' (म.1पृ. 931द्ध वह शिक्षित व्यत्तिफ गधे के समान है जो गुणहीन होते हुए भी अपने पर गर्व करता है।

नानक ते नर असलि खर जि बिनु गरबु करंत।।

;म.1पृ. 1441द्ध

गुरुनानक देव जी के अनुसार वह पढ़ा लिखा शिक्षित व्यत्तिफ भी मूर्ख है जिसमें लोभ, अहंकार आदि दुर्गुण पाए जाते हैं।

पड़िआ मूरखु आखिऐ जिसु लबु लोभु अहंकारा।।

;म.1पृ. 1441द्ध

दैवी ज्ञान जीवन में गुणों के विकास द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। अवगुण तो गले की जंजीरे हैं, फांसी के फंदे हैं, जिन्हें जीवन में गुणों के विकास द्वारा काटा जा सकता। अतः वे समाज को गुणवान बनाने के लिए गुणों के पारस्परिक प्रसार पर बल देते हुए कहते हैंः

साझ करीजै गुणह केरी छोडि अवगुण चलीए।।

;म.1पृ. 766द्ध

अतः गुरु साहिबान के संकल्प का शिक्षित व्यत्तिफ गुरमुख, ब्रह्मज्ञानी अथवा खालसा है जो जीवन में उच्च गुणों के विकास द्वारा अपने व्यत्तिफत्व को विकसित और प्रफुल्लित कर पुष्प की भांति अपने वातावरण को भी अपने गुणों की आभा से महका देता है, सुगंधित कर देता है।

मनुष्य केवल रोटी के सहारे जी नहीं सकता। उसे मानसिक शांति और आध्यात्मिक भोजन की भी आवश्यकता है। अतैव आधुनिक आदर्शवादी शिक्षा शास्त्राी, इच्छाओं के मकड़जाल में उलझे, तृष्णाओं के वात्याचक्र में फंसे मनुष्य की मानसिक आत्मिक शांति के लिए आध्यात्मिक, नैतिक शिक्षा पर बल दे रहे हैं। शिक्षा शास्त्राी Úायबल6 के अनुसार मनुष्य का आध्यात्मिक विकास करना, उसमें अंदर के सुषुप्त दैवीपन को जागृत करना शिक्षा का मुख्य उद्देश्य है। शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, भावनात्मक रूप से विकसित स्वतंत्र सचेत मनुष्य का प्रभु से तालमेल बिठाना है। अतः आधुनिक युग में भी जब मनुष्य चांद पर जा पहुँचा है उसके आध्यात्मिक और नैतिक विकास की अवहेलना नहीं की जा सकती।

2. क्रियात्मक प्रयोगात्मक शिक्षा द्वारा बौद्धिक विकासः ज्ञान के समान पवित्र वस्तु इस संसार में नहीं है। 'नहि ज्ञानेन सादृशं पवित्रामिह विद्यते।।' यह वेदों का मत है। अतः 'तमसो मा ज्योतिर्गमय' 'आत्मः दीपो भव' की कामना की जाती है। शिक्षा उस प्रक्रिया को माना जाता है जिसमें एक व्यत्तिफ सचेत रूप से ज्ञान प्रदान कर दूसरे व्यत्तिफ के विकास में सहायता करता है। यह ज्ञान की ज्योति मनुष्य के अंदर है जो गुरु की सहायता से प्रज्ज्वलित होती है।

अंतरि तीरथु गिआनु है सतिगुरि दीआ बुझाइ।।

;म.3 पृ. 587द्ध

शिक्षा प्रक्रिया में बौद्धिक विकास में ज्ञान की खोज सतत प्राप्ति का विशिष्ट स्थान है। ज्ञान को गुरु मानते हुए 'ग्यान गुरु आतम उपदेशहु' और ज्ञान की बढ़नी (झाड़ुद्ध हाथ में लेकर जीवन में कायरता और कमजोरी को दूर करने के लिए कहते हैं। 'ग्यानही की बढ़नी मनु हाथ ले कातरता कुतवार बुहारै।।' (द.ग्र. पृ. 570द्ध गुरु साहिबान द्वारा जीवन में ज्ञान प्राप्ति पर विशेष बल दिया गया है। सगल तत महि ततु गिआनु।। ;म.5 पृ. 1182द्ध अतः गुरुनानक देव जी ज्ञान की भंडार पुस्तकों के अध्ययन पर बल देते हैं। 'पोथी पुराण कमाईऐ' (पृ. 25द्ध जिस प्रकार दीपक जलाने से अंधेरा दूर हो जाता है इसी प्रकार ज्ञान का स्रोत महान ग्रंथों के अध्ययन मनन से मन की अज्ञानता दूर हो जाती है और वह पुनः मैला नहीं होता।

परंतु आधुनिक युग में हमारा पाठड्ढक्रम बालकेंद्रित होने की अपेक्षा पुस्तक केंद्रित बनता जा रहा है। व्यत्तिफ के व्यत्तिफत्व के निर्माण की अपेक्षा भारत की शिक्षा संस्थाएँ अपनी संपूर्ण शत्तिफयाँ विषयों के पढ़ाने में लगी लगा रही हैं। पश्चिम के महान शिक्षाशास्त्राी जाॅन डीवी और किलपैट्रिक ने विषयकेंद्रित पाठड्ढक्रम की नीरसता को अनुभव करते हुए क्रिया केंद्रित शिक्षा प्रणाली की वकालत की है। भारत के आधुनिक शिक्षा शास्त्राी भी प्रयोगात्मक, उद्देश्यात्मक, क्रियात्मक, शिक्षा पर बल दे रहे हैं। इस दिशा में गुरु साहिबान का दृष्टिकोण अत्यंत आधुनिक है। वे सैद्धांतिक शिक्षा के विरुद्ध हैं जो बालक की संपूर्ण शत्तिफयों का विकास नहीं करती। वे शिक्षा को केवल मात्र सूचनाएँ इकट्ठा करने से अलग मानते हैं। कोरा ज्ञान प्राप्त करना और उस पर आचरण न करना मन पर बोझ है।

कथनी बदनी पड़ि पड़ि भारु।। ;म.1पृ. 412द्ध

महर्षि टैगोर के अनुसार शिक्षा केवल ज्ञान प्रदान करने के लिए नहीं है। मनुष्य सूचनाओं का बोझ ढोने के लिए पैदा नहीं हुआ। भक्तफ कबीर के अनुसार जो ज्ञान क्रियात्मक रूप धारण कर जीवन में काम नहीं आता उसका बोझ ढोना इस प्रकार है जैसे गधे ने भार उठाया हुआ हो।

वेद पुरान पड़े का किआ गुनु खर चन्दन जस भारा।।

;पृ. 1103द्ध

यदि शिक्षा द्वारा, ज्ञान अर्जन द्वारा हमारी संपूर्ण शक्तिफयों का विकास नहीं होता तो वह 'पड़ि पड़ि गडी लदीअहि' की तरह बेकार है। ज्ञान ज्ञान के लिए पर्याप्त नहीं। ज्ञान जीने की कला सिखाएँ। दर्शन क्रिया की ओर प्रेरित करें तभी वह सच्चा ज्ञान है। अतः गुरु साहिबान ज्ञान के द्वारा मानसिक शक्तिफयों को विकसित करने की प्रेरणा देते हुए कहते हैं-

पंडित इसु मन का करहु बिचारु।।

अवरू कि बहुता पड़हि उठावहिं भारु।। (म.3 पृ. 1261द्ध

ज्ञान की प्राप्ति यदि व्यक्तिफ को ज्ञानवान, आचारवान, विचारवान बनाती है तभी वह वास्तविक रूप से शिक्षित है नहीं तो संसार में कोरे ज्ञानियों और पंडितों की कमी नहीं।

जगि गिआनी विरला आचारी।।

जगि पंडितु विरला वीचारी।। ;म.1पृ. 413द्ध

अतः गुरुजी ज्ञान की खोज में निरंतर क्रियाशील रहने परख की कसौटी पर कसने और खोज की दृष्टि को अपनाते हुए सत्य की गहराई तक पहुँचने और सत्य को सूक्ष्म निरीक्षण के बाद अपनाने की प्रेरणा देते हुए कहते हैं।

खोजी उपजै बादी बिनसै।। ;म.1 पृ. 1265द्ध

वे अपने दृष्टिकोण में कितने आधुनिक हैं।

3. समर्पित अध्यापक और समर्पित शिष्यः आधुनिक युग की तरह अध्यापक भी धन कमाने के लिए भागा पिफरता है। उसमें ज्ञान प्रदान करने, ज्ञान अर्जन करने की निस्वार्थ भावना खत्म होती जा रही है। वह अपने काम को धन की तुला पर तोलता है। आए दिन वह हड़ताल और अधिक से अधिक सुविधाएँ प्राप्त करने के संघर्ष में जुटा रहता है जिससे विद्यार्थियों की शिक्षा में बाधा पड़ती है। जो कुछ नहीं बन पाता वह अध्यापक बन जाता है। नैतिक और चारित्रिक रूप से भी वह कसौटी पर पूरा नहीं उतरता। टड्ढूशन प्रणाली के कारण अध्यापक एक व्यापारी बन गया है। शिक्षा इतनी महंगी हो गई है कि वह साधारण व्यक्तिफ की पहुँच से दूर हो गई है। आधुनिक विद्यार्थी में भी अध्यापक के प्रति प्राचीन गुरुभक्तिफ, श्रद्धा, सम्मान, प्रेम आत्मसमर्पण की कमी पाई जाती है। वह अनुशासनहीनता और विफलता की ओर अग्रसर हो गया है। प्राचीन गुरु शिष्य का रिश्ता समाप्त होता जा रहा है। विद्यार्थी सोचते हैं कि वे पैसा देते हैं और पढ़ते हैं। कक्षा में विद्यार्थियों की संख्या अधिक होने के कारण अध्यापक उनके नाम तक नहीं जानते। उनका रिश्ता औपचारिक बनता जा रहा है।

गुरु साहिबान द्वारा गुरु शिष्य की आदर्श परिभाषा आधुनिक युग में भी प्रेरणादायक है। आध्यात्मिक विकास, बौद्धिक उन्नति, नैतिक उत्थान, साहित्यिक, सांस्कृतिक विकास, व्यक्तिफत्व का सर्वांगीण चतुर्मुखी विकास एक अच्छे अध्यापक के पथ प्रदर्शन द्वारा ही संभव है। गुरु साहिबान के संकल्प का गुरु स्वयंपूर्ण है और शिशु को भी पूर्णता की ओर ले जाता है। ज्ञान से आलोकित, प्रज्ज्वलित उसके पारदर्शी व्यक्तिफत्व से स्वयंमेव ज्ञान की किरणें फूटती हैं। 'पाधा आखिऐ बिदिआ बिचरै सहजि सुभाई' (म.1, पृ. 938द्ध वह प्राचीन)षियों की तरह है जो परोपकार की दृष्टि से अध्ययन, अध्यापन में संलग्न रहता है और निस्वार्थ रूप से आर्थिक प्रलोभनों से ऊपर उठकर कड़े परिश्रम द्वारा अपनी जीविका अर्जन करता है जो विष खाता है।

मनमुखु बिदिआ बिक्रदा बिखु खटे बिखु खाइ।।

;म.1, पृ. 968द्ध

भगत कबीर भी इसी स्वर में कहते हैं-

माइआ कारन बिदिआ बेचहु जनमु अबिरथा जाई.।

;पृ. 1103द्ध

जो पंडित विद्वान, गुरु माया का व्यापारी बन पोथियाँ पढ़ता और पढ़ाता है। वह गुरुओं के संकल्प का सच्चा गुरु हो ही नहीं सकता।

पंडित वाचाहि पोथीआ ना बुझाहि विचारू।।

अनकउ मती दे चलहि माइआ का वापारू।। (म.1पृ. 56द्ध

वह पंडित जो माया के मोह के कारण पढ़ पढ़कर उच्च स्वर में चिल्लाता है, मूर्ख और गंवार है।

पंडितु पड़िपड़ि उचा कुकदा माइआ मोहि पिआरू।।

;म.3 पृ. 86द्ध

गुरु साहिबान के संकल्प का शिष्य भी गुरु के प्रति संपूर्ण समर्पित आत्मा है। उसे पता है कि गुरु भक्ति, श्रद्धा, आत्मसमर्पण, गुरु प्रति आदर, सम्मान की भावना मन को आलोकित करते हैं। शिष्य अपनी सेवा, आत्मसमर्पण, अथक परिश्रम और श्रद्धा के द्वारा गुरु के इतने समीप आ जाता है कि गुरु और शिष्य में कोई अंतर नहीं रहता। लहिणा, अंगद बन जाता है। गुरु के शरीर का अंग ज्योति ज्योति में समा जाती है।

गुरु सिखु सिखु गुरु है एको गुरु उपदेसु चलाए।।

;म.4 पृ. 444द्ध

उसकी गुरु के प्रति श्रद्धा चरमोत्कर्ष पर पहुँच जाती है। उसे गुरु परमात्मा का साकार रूप दिखाई देता है। वह गुरु के आ"वान पर शीश हथेली पर लेकर आत्मोत्सर्ग के लिए तैयार हो जाता है और ऐसे शिष्य के लिए गुरु भी सरवंश न्योछावर करने के लिए तैयार हो जाता है।

मो ग्रहि में मन ते मन से सिर लउ धन है सभ ही इन ही को।।

;द.ग्र. पृ. 716द्ध

वह अपने शिष्य के व्यत्तिफत्व का निर्माण मां जैसे प्यार से करता है।

जिउ जननी सुतु जण पालती राखै उदरि मझारी।। (पृ. 168द्ध गुरु शिष्य की पारस्परिक प्रेम और सम्मान की भावना ने एक निष्प्राण निर्जीव सोई हुई कौम को जगाकर नई कौम का निर्माण किया। शिष्यों के प्रति उनकी इस आदर और सम्मान की भावना ने उनके आत्मविश्वास और आत्मसम्मान को जगाया। उनका शारीरिक स्वरूप ही नहीं उनकी मानसिकता को भी सदा सदा के लिए बदल दिया। एक वीर स्वाभिमानी कौम का निर्माण हुआ। सवा लाख से एक को लड़ा दिया।

गुरु शिष्य के पारस्परिक सुखद संबंधों का यह संकल्प आज के समय की मांग है। जब अध्यापक एक अध्यापक न रहकर समाज का निर्माता बन जाता है। अपने शिष्य के जीवन का पथ प्रदर्शन और शिष्य अपनी संपूर्ण अनुशासनहीनता, उच्छृंखलता भूल गुरु को प्रकाश स्तंभ, मित्रा, निर्देशक और दार्शनिक मान श्रद्धा से नतमस्तक हो उसके बताए मार्ग पर चल पड़ता है।

तूं गुरु पिता तूं है गुरु माता तूं गुरु बंधपु मेरा सखा सखाइ।।

;म.4 पृ. 167द्ध

4. सामाजिक पुनर्निर्माण और औद्योगिक विकास के लिए शिक्षाः प्राचीन भारत में एक विद्यार्थी का नैतिक कर्तव्य साझा जाता था की वह अपनी शिक्षा का)ण अपनी शिक्षा पूर्ण करने पर समाज के प्रति सेवा के रूप में चुकाए। समाज उसे शिक्षा प्राप्त करने की सुविधाएँ प्रदान करता है। अतः समाज को बेहतर बनाने के लिए समाज को शिक्षित करना समाज निर्माण और कल्याण के लिए कार्य करना उसका सामाजिक कर्तव्य था। हमारे देश के प्राचीन)षियों की तरह गुरु साहिबान भी विश्वास रखते हैं कि शिक्षा संस्थाओं ने सामाजिक उन्नति के लिए शिक्षा प्रदान करने का कार्य धार्मिक कर्तव्य समझकर करना है और समाज का यह धर्म है कि वह शिक्षा की उन्नति के लिए कार्य करें। 'बिदिआ विचारी तां परउपकारी।।' (म.1 पृ. 356द्ध में गुरुनानक देव जी मानवता की सेवा को शिक्षित व्यत्तिफ की प्रमुख विशेषता बताते हैं। गुरु जी का यह महावाक शैक्षणिक विचारधारा में अद्वितीय है जिसे राष्ट्रीय समाज सेवा (एनएसएसद्ध की ओर से संपूर्ण भारत में अपनाया जा रहा है। गुरु साहिबान ने संगत और पंगत के क्रियात्मक विधान द्वारा सामाजिक पुनर्निर्माण का कार्य शुरू किया। जाति-पांति, ऊँच-नीच, अमीर-गरीब के अंतर को मिटाकर 'एक पिता एकस के हम बारिक।। मानस की जात सभै एकै पहचानबो।।' की शिक्षा प्रदान की। सामाजिक निर्माण के लिए समाज के निम्न पद दलित वर्ग और नारी के उत्थान के लिए विशेष प्रयास किए। उन्होंने लालो को सम्मानित किया। मलक भागों के पकवान खाने स्वीकार नहीं किए। सामाजिक विकास के लिए आवश्यक है कि सब को पेट भर खाना मिले। कोई किसी का शोषण न करें। मलक भागो और लालो की कहानी इस विश्वास को प्रकट करती है- जे रतु लगे कपड़े जामा होइ पलीतु।।

जो रतु पीवहि माणसा तिन किउ निरमलु चीतु।।

;म.1पृ. 140द्ध

दूसरों का शोषण करके धन कमाना मानवीय रत्तफ पीने के बराबर है। माया के ढेर पाप की कमाई के बिना इकट्टòे नहीं किए जा सकते। अतः मलक भागो, सेठ दुनीचंद और सज्जन ठग को उनका उपदेश है कि माया के इन ढेरों को गरीबों की सेवा में उनके उत्थान के लिए खर्च कर दो। सामाजिक निर्माण के लिए आय का दसवाँ अंशदान करना है इस परंपरा को सिख धर्म का अविभाज्य अंग बना दिया।

गुरु साहिबान ने अपने शिष्यों को आत्मनिर्भर बनाने के लिए उनके औद्योगिक विकास के लिए प्रयत्न किए। उन्होंने नए नगरों को बसाकर अपने शिष्यों को अनेक धंधों द्वारा जीविका कमाने के सुअवसर प्रदान किए। इस दिशा में गुरु रामदास और गुरु अर्जुन देव की देन विशेष रूप से उल्लेखनीय है जिन्होंने अमृतसर शहर को बचाकर 52 अलग-अलग उद्योगों के व्यापारियों, कारीगरों, किसानों को बसाया ताकि व्यापारिक उन्नति हो। निहाररंजन रे के अनुसार 'गुरु रामदास जी ने अमृतसर का निर्माण कर व्यापार और औद्योगिक विकास में भारी योगदान दिया।' गुरु साहिबान की शिक्षा के कारण कड़े परिश्रम के द्वारा जीविका कमाने के लिए पंजाबी संसार भर में प्रसिद्ध है। गुरुओं ने अपने शिष्यों को विदेशों में जाकर व्यापार करने के लिए प्रोत्साहित किया। गुरु अर्जुन देव जी की प्रेरणा स्वरूप सिख काबुल कंधार तक घोड़ों के व्यापार के लिए जाने लगे। गुरुओं की शिक्षा के फलस्वरुप अपने परिश्रमी स्वभाव के कारण पंजाबियों ने हरित क्रांति लाकर पंजाब को भारत का अन्न का भंडार बना दिया। वह भारत का सर्वाेत्तम किसान है। प्रति व्यत्तिफ आमदनी में सबसे आगे है। वह रेगिस्तान के सीने चीर कर दरिया बहा देता है। जंगल में मंगल बना देता है। उजड़कर पिफर बस जाता है। उसने हार माननी नहीं सीखी। वही संसार के किसी कोने में भी जाए अपने परिश्रमी स्वभाव, निडरता और साहस के कारण अपना स्थान बना लेता है। विदेशों में साउथहाॅल जैसे अनेक नगर मिन्नी पंजाब लगते हैं। कैलिफोर्निया निवासियों के अनुसार उनके जंगलों को फूलों के बागों में बदल दिया है। कनाडा की खुशहाली में पंजाबियों का विशेष योगदान है। दैनिक ट्रिब्यून रविवार 4 जुलाई 2004 अपने संपादकीय नोट 'पंजाबियत का परचम' में लिखता है कि कनाडा की 308 संसदीय सदस्य में 8 पंजाबी चुनकर आए हैं। यूं ही पंजाबियों को धरती का पुत्र नहीं कहा जाता। जहाँ भी जाते हैं अपनी धरती की सौंधी सुगंध से उस क्षेत्र को साराबोर कर देते हैं जो उन्हें गुरु साहिबान की शिक्षा के फलस्वरुप गुण में मिलती है। कहते हैं जो दीया तूफान की आंखों में जलता है अपने अस्तित्व को समाप्त नहीं होने देता वही दिया इतिहास बनाता है और इतिहास लिखता है। ऐसे ही दीपक हैं हमारे पंजाबी भाई और बहनें जिन्होंने गुरबाणी के कर्म के सिद्धांत को अपने जीवन में ढालकर संपूर्ण संसार में अपने अस्तित्व का परचम लहराया है।

सामाजिक निर्माण के लिए दान और सेवा की भावना आज भी पंजाबी सभ्यता का अंग है। गुरु का शिष्य दुखी मानवता की पुकार सुनकर भागा चला जाता है और उच्च नीच, जाति पाति, अमीर गरीब की सीमाओं से ऊपर उठकर सेवा में संलग्न हो जाता है।

'अणहोदे आपु वंडाए।। को ऐसा भगतु सदाएँ।।'

;फरीदा पृ. 1384द्ध बाबा फरीद के इन शब्दों की सार्थकता उसके लिए सदैव रहेगी। 5. नारी चेतना और सामाजिक पुनर्निर्माणः सामाजिक निर्माण और पुनरुत्थान के लिए नारी चेतना, उसके उचित स्थान और सम्मान की परम आवश्यकता है। वह पुरुष के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चलती हुई ही सामाजिक विकास में योगदान दे सकती है और जीवन का आनंद उठा सकती है। 'जहाँ जराई कामिनी तू जनि जाई कबीर' और 'भोजन भजन और नारी तीनों पर्दे के अधिकारी' के उस युग में गुरु नानक देव जी का 'सो किउ मंदा आखीऐ जितु जमहि राजान' (पृ. 473द्ध कहना तत्कालीन नारी विरोधी युग में एक क्रांतिकारी कदम था। गुरु जी के व्यत्तिफत्व के निर्माण में तीन स्त्रियों माता तृप्ता, बहन नानकी और पत्नी (माताद्ध सुलखनी का योगदान था जिन्होंने उन्हें भरपूर प्यार सहयोग और सम्मान दिया। माता सुलखनी की प्रशंसा करते हुए वह कहते हैं

'पारजातु घरि आगनि मेरै' (पृ. 503द्ध मेरे घर में तो कमल का फूल खिल रहा है जिससे मेरा घर आंगन महक उठा है। स्त्राी के प्रति उनकी इस आदर और सम्मान की भावना को बाकी गुरु साहिबान ने भी अपनाया और स्त्राी की सामाजिक स्थिति सुधारने और प्रशिक्षित करने के लिए प्रयास किए। गुरुद्वारों के साथ खोलें प्रारंभिक स्कूलों में लड़कों के साथ लड़कियों को शिक्षित करने का प्रयास किया जिसका प्रमाण इस बात से मिलता है कि गुरु अंगद देव जी की बेटी बीबी अमरों की सुरीली आवाज में गुरबाणी का पाठ सुनकर गुरु अमरदास जी की कायाकल्प हो गई। गुरु हरगोबिंद की बेटी बीबी वीरों की शिक्षा के लिए गुरु हरगोबिंद साहिब द्वारा हस्तलिखित पुस्तिका अभी कीरतपुर के गुरुद्वारे में मंजी साहिब में उपलब्ध है। स्त्राी को समाज का बढ़िया अंग बनाने के लिए गुरु साहिबान ने उसे सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक, राजनीतिक क्रियाओं में भाग लेने के लिए प्रेरित किया। उसे काम करने, सोचने और बोलने की स्वतंत्राता प्रदान की। उसे संगत और पंगत की क्रियाओं में भाग लेने के लिए उत्साहित किया। माता खीवी की लंगर सेवा सुप्रसिद्ध है। उसमें आत्मविश्वास और आत्मसम्मान की भावना को जागृत करने के लिए उसे पुरुष के साथ एक बाटे में से अमृत पान करने का अधिकार दिया। उसे पाँच ककार धारण करने की आज्ञा देकर उसके नाम के साथ कौर अथवा कुंवर शब्द लगाकर उसे शेरनी बनाया। आत्मरक्षा के लिए उसे सैनिक शिक्षा प्रदान की जिसका उदाहरण भाई भाग और बीबी शरण कौर की कहानियों से मिलता है जिन्होंने युद्ध क्षेत्र में मुगल सैनिकों से टक्कर ली। गुरु गोबिंद सिंह ने 'चंडी दी वार' में स्त्राी के वीरांगना रूप का चित्राण किया।

गुरु साहिबान ने स्त्राी जीवन में घुन की तरह खाने वाली को प्रथाओं के विरुद्ध आवाज बुलंद की। गुरु अमरदास ने सती प्रथा, बाल विवाह, बहुविवाह का विरोध और विधवा विवाह का समर्थन किया। उन्होंने 'एक जोति दुइ मूरती' कहकर स्त्राी को सम्मानित किया। 22 मंजिओं के प्रचारकों में स्त्राी को भी प्रचारक नियुत्तफ किया। अपनी बेटी की सेवा से प्रसन्न होकर गुरु गद्दी का वारिस उसके पति गुरु रामदास को बनाया। अपनी बेटी बीबीभानी के नाम से जमीन खरीदी जहाँ बाद में अमृतसर बसाया। गुरु हरगोबिंद साहिब ने औरत को ईमान कहा। उन्होंने दहेज प्रथा पर करारी चोट करते हुए माता गुजरी के पिता लालचंद को कहा 'लालचंद तुम दीनों सकल बिसाला।। जिन तनुजा अर्पण कीन तै पाछे क्या रख लीन।।' माता गंगा से आशीर्वाद स्वरुप उन्होंने शीलवान कन्या का वरदान मांगा।

शीलवान कन्या इक होवे नहीं ता7 मां गृहस्थ विगोवे।।

गुरु जी के यह शब्द आधुनिक युग में जब भ्रूण हत्या के फलस्वरूप गुरुओं की इस धरती पंजाब की में स्त्रियों की संख्या 1000 के पीछे 770 रह गई है हमारा मार्गदर्शन करते हैं।

गुरु गोबिंद सिंह ने अपने हुक्मनामे में आदेश दिया है 'गुरु का सिक्ख कन्या नहीं मार, कुड़ी मार नाल नहीं वरते।' गुरु हरिकृष्ण राजाराम के सामाजिक बहिष्कार का आदेश दिया जो अपनी कन्याओं को जन्मते ही मार देता था। आज आवश्यकता है गुरु साहिबान के इन विचारों के प्रचार और प्रचार की जब भ्रूणहत्या हमारी समाज में जोरों पर है। आज बलात्कार की घटनाएँ दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही हैं। भाई गुरुदास का कथन है 'देखि पराईआ चंगिआं मावाँ भैणा धीआं जाण' (29/11) और गुरु गोबिंद सिंह का आदेश है जो 'सिक्ख तुरकनी भोगे जाए' 'उह नहीं बखशिया जाए कदाई' यहाँ तक कि दुश्मन की स्त्राी का भी उपभोग नहीं करना। आज एड्स का रोग सुरसा के मुंह की तरह बढ़ता जा रहा है

इस रोग से हमारा बचाव हो सकता है यदि हम गुरु साहिबान के आदेश पर आचरण करें:

निज नारी के साथ नेहु तुम नितबढैयहु।।

पर नारी की सेज भूलिसुपने हूँ न जैयहु।। (द.ग्र. पृ. 842) जैसा संगुबिसीअर सिउ हे रे तैसो ही इहु पर गृहु।।

;म.5 पृ. 403द्ध

आधुनिक युग में भी गुरु साहिबान में यह प्रगतिशील विचार स्त्राी के निर्माण में सहायक सिद्ध हो सकते हैं। आवश्यकता है उनके पुनः प्रसार और प्रचार की।

6. शारीरिक और सैनिक शिक्षा पर बलः शरीर मनुष्य का पहला धर्म है। 'शरीरम् खलुद्यं धर्मम् मनुजस्य।।' स्वस्थ शरीर मनुष्य की सबसे बड़ी पूंजी है। 'हरी मंदरू एहु सरीरू' है। (म.3, पृ. 1346) हरि मंदिर रूपी शरीर को शारीरिक व्यायाम, संतुलित भोजन संयमित जीवन के द्वारा स्वस्थ और निरोग रखने की आवश्यकता है और प्रत्येक युग में रहेगी। आधुनिक युग में स्वामी विवेकानंद कहते हैं कि मैं गीता पढ़ने की अपेक्षा फुटबाॅल खेलना अधिक पसंद करूँगा क्योंकि इसके द्वारा स्वस्थ शरीर का निर्माण होता है। 'नचणु कुदणु मन का चाउ' (पृ. 465द्ध। जहाँ नाचने कूदने के द्वारा स्वस्थ शरीर का निर्माण होता है वहाँ प्रसन्नता की प्राप्ति होती है। गुरु नानक देव जी के अनुसार संयमित, संतुलित भोजन ग्रहण कर शरीर को विषय विकारों से बचाना है।

बाबा होरू खाणा खुसी खुआरू।

जितु खाधै तनु पीड़िऐ मन महि चलहि विकार।। (म.1पृ. 16) गुरु अंगद देव जी के समय से शारीरिक शिक्षा गुरु साहिबान

के पाठ्ढक्रम का अविभाज्य अंग बन गई। उन्होंने शारीरिक रूप से अपने शिष्यों को मजबूत बनाने के लिए अखाड़े बनाए। स्वाभिमान की रक्षा के लिए, दुष्टों के दमन के लिए, स्वतंत्राता के आ“वान के लिए शारीरिक दृष्टि से मजबूत ताकतवर सैनिकों की आवश्यकता थी। गुरु हरगोबिन्द सिंह और गुरु गोबिंद सिंह जी ने निराशा के भंवर में डूबी मुगल राजाओं द्वारा पद्दलित निष्प्राण, निर्बल हिन्दुओं को शारीरिक, व्यायामों और सैनिक शिक्षा के द्वारा मजबूत, ताकतवर बनाने का शुभ कार्य आरम्भ किया। उनकी दिनचर्या का अधिकांश समय अपने साथियों को कुश्ती लड़ना, कबॉ6ी खेलना, घुड़सवारी करना, गतका खेलना, शिकार खेलना, तीर और तलवार चलाना, नेजबाजी, नकली युद्ध कौशल के दांव पेंच दिखाने में व्यतीत होता। उन्होंने शारीरिक और सैनिक शिक्षा को सिक्खशिक्षा प्रणाली का अभिभाज्य अंग बनाकर नवीन इतिहास का सृजन किया। उन्होंने आत्मसम्मान की रक्षा के लिए, देश और कौम की रक्षा के लिए, तलवार को खालसे की पोशाक का अंग बना दिया। इस शारीरिक, सैनिक शिक्षा के द्वारा साधारण मानव के जीवन का नव निर्माण हुआ। उनका मनोबल आत्मविश्वास, आत्मसम्मान जागृत हुआ। उसमें अत्याचारी राजाओं को चुनौती देने का साहस उत्पन्न हुआ। वह नया इतिहास सृजन करने में समर्थ बना। भारत की उत्तरी पश्चिमी सीमाओं से निरंतर होते आक्रमणों का इसने मुख मोड़ दिया। डाॅ. गोकुल चंद नारंग8 के अनुसार 'वे मनुष्य जिन्होंने कभी तलवार का स्पर्श तक नहीं किया था बहादुर योद्धा बन गए। हलवाई और मोची, धोबी और जमादार, सेनाओं के नेता बन गए जिनके

योद्धा बन गए उनके सम्मुख राजे कांपते थे और नवाब डर के झुक जाते थे।' जिन्होंने बंद बंद कटवाए, चरखाड़ियों पर चढ़े, दीवारों में चिने गए, सरफरोशी की तमन्ना गाते हुए फांसी के फंदे को चूम लिया परंतु जिनके होंठ सदैव 'सूरा सो पहचानिए जो लड़े दीन के हेत।' 'पुरजा पुरजा कटि मरे कबहूँ न छाड़े खेतु' (कबीर पृ. 1105) गीत गुनगुनाते रहे। आंकड़े गवाह है कि भारत के स्वतंत्राता आन्दोलन में सिक्खों का योगदान और शाहिदियों की मात्र सर्वाधिक है। खुशवंत सिंह9 के अनुसार सिक्ख भारत की जनसंख्या का 2» हैं परंतु

भारतीय सेना का प्रत्येक 10वाँ सैनिक सिक्ख है। एवरेस्ट पर्वत पर नौ भारतीय चढ़े जिन में तीन सिक्ख थे। भारत की खेलों की टीमों में प्रत्येक तीसरा खिलाड़ी सिक्ख होता है। उसमें शारीरिक, सैनिक शिक्षा के कारण सिक्ख स्वस्थ ऊँचे लंबे और तगड़े होते हैं। इस शारीरिक, सैनिक शिक्षा में पंजाबियों को मरने से न डरने वाले,मृत्यु से भी मजाक करने वाली को बना दिया है। गुरु साहिबान का शारीरिक, सैनिक शिक्षा का अपनी शिक्षा प्रणाली का अभिभाज्य अंग बनाना शिक्षा के क्षेत्र में उनकी बहुत बड़ी देन है जो सदैव हमारा प्रदर्शन करती रहेगी। जिसकी सार्थकता प्रत्येक युग में रहेगी। 7. मातृभाषा, साहित्यिक, सांस्कृतिक, कलात्मक, भावनात्मक शिक्षा पर बलः किसी भी देश को मानसिक रुप से परतंत्र बनाने के लिए उसकी भाषा, संस्कृति को छीन कर अपनी भाषा, संस्कृति को शिक्षा को लागू कर उसे सहज रूप से गुलाम बनाया जा सकता है। अंग्रेजों ने भारतवासियों को मानसिक रूप परतंत्र बनाने के लिए अपनी भाषा और संस्कृति को भारतीय शिक्षा प्रणाली का अविभाज्य अंग बना दिया। यहाँं तक की स्वतंत्राता प्राप्ति के बाद भी हमें विदेशी भाषा, वेशभूषा और संस्कृति को अपनाना अपनी शान समझते हैं। इसी तरह मुगलों के राज्य में उनकी भाषा, सभ्यता, संस्कृति की नकल करना भारतवासी अपनी शान समझने लगे थे। परंतु गुरु नानक देव जी 'घरि घरि मीआ सभनां जीआं बोली अवर तुमारी' (पृ. 119) और खत्रीआ त धरमु छोडिया मलेछ

भाखिआ गही' (पृ. 663) के विरुद्ध थे।

गुरु साहिबान भारतवासियों द्वारा अपनी भाषा, सभ्यता, संस्कृति को त्यागकर विदेशी भाषा, सभ्यता, संस्कृति अपनाने का विरोध करते हैं। वे 'कूजा बाग निवाज मुसला नील रूप बनवारी' (पृ. 119) को पसंद नहीं करते हैं।

'अंतरि पूजा पड़हि कतेवा संजमु तुरका भाई। छोडिले पाखंडा।। (म.1, पृ. 471द्ध

'अंधी रयती गिआन विहूणी।।' (पृ. 469द्ध

अज्ञान के अंधकार में डूबी साधारण जनता में ज्ञान की ज्योति का प्रचार-प्रसार कर उनके नव निर्माण के लिए गुरुद्वारों के साथ संलग्न आरंभिक पाठशालाएँ खोली जिनमें जनसाधारण के द्वार तक शिक्षा को सहज रूप से पहुँचाने के लिए मातृभाषा पंजाबी को शिक्षा का माध्यम बनाया। मुगलों के राज में जब उर्दू फारसी का बोलबाला था मातृभाषा पंजाबी को शिक्षा का माध्यम बनाना शिक्षा के क्षेत्र में बहुत बड़ी देन है। गुरु साहिबान ने बाणी रचना द्वारा कथा कीर्तन

द्वारा लिखित रुप से बड़ों और बच्चों को सचेत अचेत रूप से शिक्षित करने का प्रयास किया। पोथियों के निर्माण द्वारा, संगत में साहित्य को बांटकर साहित्य के पढ़ने की प्रेरणा दी। श्री गुरु अर्जुन देव जी ने गुरु और संतों भत्तफों की बाणी को श्री गुरु ग्रंथ साहिब में शामिल कर-

'पीऊ दादे का खोलि डिठा खजाना।।' (पृ. 186) को 'पोथी परमेसर का थानु।।' (पृ. 1226द्ध

बनाकर अपनी शिक्षा प्रणाली के अध्ययन, अध्यापन का अविभाज्य अंग बनाकर बाणी के गायन, मनन, चिंतन द्वारा शिक्षकों में भावनात्मक, सांस्कृतिक, साहित्यिक विकास में महान योगदान

दिया। गुरबाणी की शिक्षा में भारतीय धर्म, दर्शन और संस्कृति और सभ्यता का सार मिलता है। सारे गुरु साहिबान महान साहित्यकार थे जिन्होंने अपनी बाणी रचना, साहित्य रचना, अनुवाद कार्य द्वारा भारतीय जनता को जागृत करने और उनकी मानसिकता को बदलने का महान कार्य किया।

साहित्य, संगीत, कविता, चित्राकारी, नृत्य आदि ललित कलाओं की शिक्षा व्यत्तिफत्व के अंदर सौन्दर्यात्मक, भावनात्मक कलात्मक विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। जीवन में आनंद का संचार करने और व्यत्तिफ की रचनात्मक, भावनात्मक प्रतिभा को विकसित करने का सर्वाेत्तम साधन है। यह अत्यंत प्रसन्नता का विषय है कि गुरु ग्रंथ साहिब की बाणी में साहित्य, संगीत और काव्य का संगम है। सत्यं, शिवं, सुन्दरम की त्रिवेणी बहती है। संपूर्ण बाणी संगीतमय और रागों में रचित है जिसका कीर्तन, शब्द गायन आधुनिक समय में भी जनता की भावनात्मक भूख को शांत करता, दैवी आनंद प्रदान करता आ रहा है। आज भी गुरुओं की लाडली फौजे,

‘देहि शिवा बर मोहि इहै।।’ (द.ग्र.पृ. 99) और ‘सूरा सो पहिचानीऐ’ (पृ. 1105द्ध

की वीरध्वनि का मार्च पास्ट करती हुई अपना जीवन देश को अर्पण के लिए प्राण हथेली पर लिए निकल पड़ती हैं।

आज अंबर तक छूते धन के ढेर में खड़ा मनुष्य पूछता है शांति कहाँ है? मानसिक तनाव के कारण अनेक रोग से ग्रस्त है। आधुनिक मनोवैज्ञानिकों और डाॅक्टरों के अनुसार दैवी संगीत का कीर्तन बाणी का पठन-पाठन, चिंतन, मनन सात्विक विचार न केवल शांति और आनंद प्रदान करते हैं अपितु शकर रोग, उच्च रत्तफचाप, हृदय रोग आदि के उपचार में भी सहायक सिद्ध होते हैं। शुभ विचार तरंगें हमारे वातावरण में प्रसारित होकर वातावरण को निर्मल, स्वस्थ, सुखद बनाती है। प्रतिदिन संगत में गुरबाणी का कीर्तन जहाँ भावनात्मक बल प्रदान करता है वहाँ पारस्परिक प्रेम, सांझीवालता और सौहार्द की भावना का विकास होता है। गुरुबानी के गायन द्वारा प्रदत्त भावनात्मक बल के कारण, चढ़ती कला में रहते हुए, वह कठिनाइयों के सम्मुख घबराता नहीं। चट्टठान बनकर खड़ा हो जाता है ‘जिसके सिर ऊपर तू स्वामी सो दुखु कैसे पावै’ ‘तेरा कीया मीठा लागै’ के शब्दों को गुनगुनाता हुआ दृढ़ कर्मो से जीवन डगर पर बढ़ता चला जाता है।

8. राजनैतिक, लोकतंत्रीय चेतना का विकास: गुरु साहिबान

द्वारा मानवतावादी लोकतंत्रीय विचारों पर आधारित सच्चे की सरकार की स्थापना का प्रयास गुरु नानक देव जी के समय से प्रारंभ हो जाता है। गुरु साहिबान तत्कालीन राजनीतिक सत्ता के साथ संघर्ष में आए। इसके हाथों दुःख भोगा। प्रतिक्रिया स्वरूप उसके विरुद्ध संघर्ष किया ताकि साधारण जनता बढ़िया राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक जीवन जी सकें।

‘पाप की जंझ लै काबलहु धाइआ’ (पृ. 722द्ध

‘एती मार पई कुरलाणे।।’ (म.1 पृ. 360) और ‘राजे सीह मुकदम कुते।।’ (पृ. 1228द्ध

कहकर तत्कालीन राजनीतिक सत्ता की तीखी आलोचना करना गुरु नानक देव जी को सिक्ख धर्म की राजनैतिक चेतना का नेता

बनाता है। परतंत्राता के गहन अंधकार में स्वतंत्राता की शमा रोशन करने वाला बनाता है सिक्ख धर्म के सैनिक स्वरूप का जन्मदाता बनाता है। बाबरबाणी की क्रांतिकारी रचना से शुरू हो जाती है, राजनीतिक चेतना का विकास जो गुरु अर्जुन देव के समय स्पष्ट रूप में धारण कर लेती है।

तखति राजा सो बहै जि तखतै लाइक होई।।

जिनी सचु पछाणिआ सचु राजे सेई।। (म.3 पृ. 1088द्ध

अब सिक्ख गुरु केवल धार्मिक नेता न रहकर, सत्ताधारी राज्य करने वाले सच्चे पातशाह बन गए। डाॅ. हरिराम गुप्ता10 के अनुसार सिख कौम ने मुगल स्टेट के अंदर अपनी स्टेट कायम करके अपनी राजनीतिक उन्नति का मार्ग प्रशस्त किया। गुरु हरगोबिंद साहिब को मीरी पीरी की दो तलवारें धारण कर गद्दी पर बैठना और तख्त साहिब का निर्माण करना मुगल बादशाह की शत्तिफ को खुली चुनौती थी। उन्होंने अकाल तख्त की छत्राछाया के नीचे एक स्वचालित सत्ताधारी कौमान्तरी खालसा सल्तनत का ऐलान किया। गुरु हरगोबिंद साहिब और गुरु गोबिंद सिंह ने मुगलों के विरुद्ध युद्ध लड़कर सिखों को राजनीति की क्रियात्मक शिक्षा प्रदान की।

गुरु साहिबान के द्वारा प्रदत्त यह राजनैतिक शिक्षा क्रियात्मक

रूप से लोकतंत्रीय है। गुरुद्वारा में संगत पंगत की स्थापना द्वारा जाति पात, ऊँच नीच, अमीर गरीब के भेदभाव मिटाकर सांझीवालता,भातृत्व भाव और बराबरी का संदेश प्रदान किया जाने लगा। पंच प्रधान बन गए जिनकी महिमा गुरु नानक देव जी ने जपुजी साहिब में गाई है। पंचों के निर्माण के द्वारा समस्याएँ सुलझाई जाने लगी। संगत पंगत, पंचायत लोगों की आवाज बन गई। 'पांचों में नित बरतत मैं हूँ।। पाँच मिलै तो पीरन पीर' गुरुमता लोकराय का साधन बन गया। फ्पंच परवान पंच परधानुय् कहकर लोगों की राय को सम्मानित किया जाने लगा। जत्था, दीवान, दल, पंथ, खालसा की स्थापना होती चली गई। संगत खालसा रूप धारण कर गई। सिख धर्म और राजनीति का अटूट संबंध स्थापित हो गया। गुरु गोबिंद सिंह ने विभिन्न जातियों, धर्मों प्रांतों के पाँच प्यारों का चुनाव कर एक बाटे से अमृतपान करा क्रियात्मक रूप से लोकतंत्रीय चेतना का पाठ पढ़ाया। जनता जनार्दन की शत्तिफ को पहचाना। डाॅ. ए.सी. बनर्जी11 के अनुसार सिक्ख गुरुओं से बड़ा लोकराजी और कोई नहीं। उन्होंने केवल लोकतंत्र की शिक्षा ही नहीं दी लोकतंत्रीय क्रियात्मक रूप से जी कर दिखाया। डाॅ. हरीराम गुप्ता12 के अनुसार गुरु गोबिंद सिंह ने 90 वर्ष पूर्व स्वतंत्राता, मानव एकता, भ्रातृत्व भाव के सिद्धांतों की घोषणा की जो Úांसीसी क्रांति के आधार बने। आर्नाेल्ड टायनिबी13 के अनुसार गुरु जी ने दो शताब्दी पूर्व लोकतंत्र की भावना का विकास किया। इस तरह उन्होंने ढाई शताब्दी पूर्व संयुत्तफ राष्ट्र के मौलिक मानवीय अधिकारों, स्वाभिमान, आत्मसम्मान और स्त्राी पुरुष की बराबरी के

द्वारा ऐसे स्वतंत्र वातावरण का सृजन किया जहाँ न्याय और मानवीय आत्मसम्मान की भावना का विकास हो। न्याय, स्वतंत्राता, बराबरी, मातृभाव आदि के सिद्धांत जिन पर गुरु जी ने अपना नया अद्भुत लोकतंत्र स्थापित किया भारतीय संविधान के मुख्य आधार बनें। महर्षि अरविंद के अनुसार खालसे के सृजन ने इतिहास का मुख मोड़ दिया। खालसा सृजन की लोकतंत्रीय संस्था आश्चर्यजनक रूप से

नवीन और मौलिक है जो आधुनिक युग में भी युग निर्माण की सार्थकता रखते हैं क्योंकि उनका दृष्टिकोण सार्वभौमिक और संपूर्ण मानवता के कल्याण के लिए है।

9. देशभत्तिफ राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय सद्भावना की शिक्षाः भारत की आधुनिक परिस्थितियों में धार्मिक सद्भावना और राष्ट्रीय एकता समय की मांग है। अनेकता में एकता पैदा करना है राष्ट्रीय एकता का आधार है। भारत में अनेक धर्मों, जातियों और प्रांतों के लोग रहते हैं। इस भिन्नता में अभिनेता उत्पन्न करना हमारी राष्ट्रीयता के लिए परम आवश्यक है। गुरु साहिबान की देशभत्तिफ, राष्ट्रीय भावना का विकास कर सकते हैं।

अवलि अलह नूरु उपाइआ कुदरति के सभ बंदे।।

एक नूर ते जगु उपजिआ कउन भले को मंदे।।

;कबीर पृ. 1349) कबीर की पंतिफयाँ श्री गुरु ग्रंथ साहिब की शिक्षा का मुख्य आधार है जो मानवतावाद और एकतावाद का संदेश देने वाली प्रचलित धर्मों के संतो, भत्तफों की बाणी का सामूहिक, धार्मिक ग्रंथ है। उसकी आधारभूत सच्चाईआं और मूल्यों में हिंदुओं, मुसलमानों व ईसाईयों वेदों, पुराणों, उपनिषदों की सार्वभौमिक सर्वकालिक सच्चाईओं और मूल्यों को देखा जा सकता है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में विभिन्न जातियों, धर्मा ं, प्रांतों के संतो, भत्तफों की बाणी को शामिल करना श्री गुरु अर्जुन देव जी का भारत को भावनात्मक एकता में पिरोने का एक बहुत बड़ा प्रयास था। हरिमंदिर साहिब की नींव एक मुसलमान पीर दरवेश मिया मीर से रखवाना इस तथ्य को प्रकाशित करता है कि वह भारत देश को एक सांझा धार्मिक ग्रंथ, एक सांझा तीर्थ स्थान देकर राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ बनाने का प्रयास कर रहे थे। हरिमंदिर साहिब के चार द्वार इस बात के सूचक हैं कि उनका उपदेश, खत्री, ब्राह्मण, सूद, बैस उपदेसु चहु वरना कउ सांझा है। राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना, विश्वबंधुत्व फ्वसुधैव कुटुंबकमय् प्रेम और शांति का संदेश देने के लिए गुरु नानक देव जी ने बीस वर्षों के लंबे समय तक देश देशांतरों का रटन किया। सरबत की भलाई की कामना करते हुए बाकी गुरु साहिबान ने भारत के विभिन्न प्रांतों में पारस्परिक सहयोग और सद्भावना का संचार करने के लिए

इस भ्रमण प्रणाली को अपनाया।

श्री हरगोबिंद और गुरु गोबिंद सिंह की सेना में हिंदू-मुसलमान दोनों जातियों के सैनिक थे। भाई कन्हैया का बिना भेदभाव मुसलमान

घायल सिपाहियों को पानी पिलाना धार्मिक सद्भावना का प्रतीक है। सांस्कृतिक एकता राष्ट्रीय जागरण और भावनात्मक एकता को सुदृढ़ करने के लिए गुरु गोबिंद सिंह ने अपने दरबारी कवियों के सहयोग के द्वारा भारत के पौराणिक, धार्मिक राज्यों का पुनर्सृजन किया। भाषाई भेदभाव के ऊपर उठकर हिंदी, पंजाबी, फारसी में साहित्य रचना की। संस्कृत के पठन-पाठन को प्रोत्साहन दिया।

गुरु साहिबान एक देशभत्तफ कौम का निर्माण करना चाहते थे इसके लिए उन्होंने ढाई सौ वर्ष तक अथक प्रयास किया था कि वह परतंत्राता की जंजीरों में जकड़े भारत को स्वतंत्र करा सके। इस देशभत्तिफ की भावना का जन्म हो जाता है गुरु नानक देव जी की उस करुण पुकार से जो उन्होंने बाबर द्वारा निशस्त्र भारतवासियों की

खून की होली खेली जाती देखकर की।

जै जीवै पति लथी जाइ।। सभु हरामु जेता किछु खाइ।।

;म.1 पृ. 142द्ध

आत्म-सम्मान गँवा कर जीना भी कोई जीना है। आओं मुगलों के चंगुल से देश को स्वतंत्र कराने के लिए अपने आपको न्योछावर कर दो। 'सिरू धरि तली गली मेरी आउ', (पृ. 1412) 'तुम मुझे

खून दो मैं तुम्हें आजादी दूंगा' सुभाष चंद्र बोस के इस कथन का बीज गुरु नानक देव जी के इस कथन में विद्यमान है। गुरु अर्जुन देव जी और गुरु तेगबहादुर ने अपनी शहीदियों द्वारा इस स्वतंत्राता के पौधें को सींचा और गुरु हरगोबिंद साहिब और गुरु गोबिंद सिंह ने

एक वीर कौम के निर्माण द्वारा भारत की परतंत्राता की बेड़ियों को काटने में भरपूर सहयोग दिया। तभी तो पंडित मदन मोहन मालवीय कहते हैं कि भारत यदि ताकतवर बनना चाहता है उन्नति करना चाहता है तो प्रत्येक हिंदू को अपना बड़ा लड़का सिक्ख बनाना चाहिए। (सिक्ख रीवियु, फरवरी 2002 पृ. 37द्ध

इस लेखिका की अनेक विद्वानों, साहित्यकारों, अध्यापकों, विद्यार्थियों, सैनिक, अफसरों, डाॅक्टरों, उच्च अधिकारियों और साधारण लोग से बातचीत हुई कि आज के वैज्ञानिक युग में श्री गुरु ग्रंथ साहिब की शिक्षा का उनके जीवन पर कितना प्रभाव है। उनका कहना था कि वे सचेत अचेत रुप से श्री गुरु साहिब और गुरु साहिबान की शिक्षा से जुड़े हुए हैं। आज भी गुरु साहिबान की बाणी की अनेक उत्तिफयाँ कहावतों का रूप धारण कर उनका प्रदर्शन करती हैं। उनके व्यत्तिफत्व के निर्माण और जीवन को संवारने में गुरु साहिबान की शिक्षा का गहरा प्रभाव है। उनकी शिक्षा उन्हें कड़ा परिश्रम करना सिखाती है। 'आपण हथी आपणा आपे ही काजु सवारीऐ' (पृ. 474) और साथ ही 'हंसदिआ खेलदिआ पैनंदिआ

खावंदिआ' (पृ. 522) की शिक्षा देकर जीवन का आनंद उठाना सिखाती है। केवल अपने लिए ही जीवन नहीं सिखाती (पृ. 356द्ध

द्वारा मानवता की सेवा भी सिखाती है। 'शुभ करमन से कबहूँ न डरो'

द्वारा नैतिक निर्माण की शिक्षा देती है। आत्मसम्मान की रक्षा करना सिखाती है। 'जै जीवे पति लथि जाइ। सभु हरामु जेता किछु खाइ' दुःख के समय भी प्रभु की आज्ञा शिरोधार्य करने की शिक्षा देती है।

'तेरा कीआ मीठा लागै' पंजाबी संसार के किसी कोने में हो गुरु साहिबान की शिक्षा द्वारा अपने आध्यात्मिक, धार्मिक, नैतिक, सांस्कृतिक, सामाजिक धरोहर से जुड़े हुए हैं। जहाँ भी वे जाते हैं गुरुद्वारे स्थापित हो जाते हैं। कथा, कीर्तन,लंगर का प्रवाह चल पड़ता है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बाणी तो सचमुच आत्मा का संगीत है, कर्म का स्रोत है, ज्ञान का भंडार है, ज्योति स्तंभ है, प्रकाश पुंज है, प्रेरणा स्रोत है जो सदैव जीवन को और आलोकित करती हुई जीवन जीने की कला सिखाती रहेगी। यहाँ तक कि आधुनिक युग में विवेकानंद और महर्षि टैगोर जैसे महानुभाव की इसकी शिक्षा से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकें। महर्षि टैगोर के जीवन पर गुरु साहिबान की शिक्षा का प्रभाव हम उनके शब्दों में इस प्रकार कर सकते हैं सुंदर, आकर्षक, स्वस्थ पंजाबी दूर से ही पहचाना जाता है। यह गुरु साहिब की शिक्षा का प्रभाव है कि निर्भय, निर्वैर स्वभाव के कारण गर्व से सिर ऊँचा कर सम्मान पूर्वक जीवन यापन करता

है। उसका चरित्र और मुख मंडल उदारता और ज्ञान से चमकता रहता है। अमलेंदु बोस14 अपने लेख टैगोर और सिक्ख के अनुसार महर्षि टैगोर अपनी आत्मकथा में लिखते हैं कि उनके पिताजी प्रतिवर्ष सच्चाई और शांति की खोज में श्री अमृतसर स्वर्ण मंदिर जाते रहते थे। बालक टैगोर भी उनके साथ जाते थे। बालक टैगोर के मन में गुरबाणी गायन का ऐसा स्थायी और अमिट प्रभाव पड़ा जो संपूर्ण आयु बना रहा। वह जपुजी साहिब की कुछ 'पऊड़ियों' का पाठ निरंतर करते रहें। उन्होंने गुरु नानक, गुरु गोबिंद सिंह और सिक्ख वीरों के बारे में बच्चों के लिए सरल भाषा में निबंध लिखे जिनका बंगाली जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ा जिसके फलस्वरूप कई प्रसिद्ध बंगाली लेखकों ने गुरु साहिबान के बारे में पुस्तकें लिखी। टैगोर ने जपुजी साहिब की कुछ 'पऊड़ियों' का बंगाली में अनुवाद किया जिन्हें आज भी बंगाली समाज में गाया जाता है। कथाओं, कहानी में सम्मिलित गुरु गोबिंद सिंह, बंदा सिंह बहादुर, तारु सिंह की कहानियों का ब्रह्म समाज पर विशेष प्रभाव पड़ा। बंदा वीर की कहानी तो अपने भावुकता के आवेश में मन को बहाकर ले जाती है। इसमें मन को झकझोरने की शत्तिफ है। ब्रह्म समाज के क्रांतिकारी वीरों के द्वारा गुरु गोबिंद सिंह और बंदी वीर की कहानी बड़े जोश के साथ गाई जाती है। टैगोर

के मन पर गुरु गोबिंद सिंह और बंदा बहादुर के सैनिक स्वरूप का विशेष प्रभाव पड़ा। इस प्रकार हम देखते हैं कि गुरु साहिबान के शैक्षिक विचारों की सार्थकता आधुनिक युग में भी है और सदैव रहेगी क्योंकि उनकी शिक्षा प्रणाली सार्वभौमिक, सार्वकालिक मूल्यों पर आधारित हैं जो कभी पुराने नहीं होते।

'उत्तम सलोक साध के वचन' 'अमुलीक लाल एही रतन'

'सुनत कमावत होत उधार' 'आपि तरै लोकह निसतार'

;म.5 पृ. 295द्ध

संदर्भ सूची

1. अर्नाल्ड टायनबी-द सिलेक्शन Úाॅम द सेकरड राइटिंगज आॅफ द सिक्खस-यूनेस्को 1960 पृ. 9-11
2. एच.एल.ब्राडशा-गुरबख्श सिंह-यूनिवर्सल मैसेज,रीचारडसन 1991 पृ. 8
3. डोरोथी फील्ड रिलीजन आॅफ द सिक्खस लंदन 1914 पृ. 9
4. डाॅ. डोनाल्ड जी दवे-गुरु नानक कोमेमोरेटिव वाॅल्यूम संपादक डाॅ. गुरबचन सिंह सालवी पटियाली यूनिवर्सिटी पटियाला 1969 पृ. 113 114
5. रिपोर्ट आॅफ द सेकेंडरी एजुकेशन कमिशन मुदालियर 23-15
6. आर.आर.रश्क द यूनिट आॅफ ग्रेट एजुकेशनिसटस न्यूयाॅर्क 1969 पृ. 271
7. गुरु विलास पादशाही छेवी-अध्याय आठवाँ
8. गोकुल चंद नारंग, ट्रांसफाॅरमेशन आॅफ सिक्खइजम पृ. 84
9. सुखवंत सिंह दा सिक्खस-अंग्रेजी ट्रिब्यून 1 जुलाई 2001
10. डाॅ. हरिराम गुप्ता, हिस्ट्री आॅफ द सिक्खस भाग 1 पृ. 134
11. ए.सी. बनर्जी, हिस्ट्री आॅफ द सेक्स भाग पहला पृ. 282
12. हरिराम गुप्ता, हिस्ट्री आॅफ द सिक्खस भाग पहला पृ. 282
13. अर्नाल्ड टायनबी,ए स्टडी आॅफ हिस्ट्री पृ. 748
14. अमलेंदु बोस, टैगोर एंड द सिक्ख, संपादक गुरबचन सिंह तालिब गुरु नानक कोमेमोरेटिव वाॅल्यूम पृ. 200

;सिख गुरुओं का शैक्षणिक योगदान-डाॅ. अमृत कौर रैना-पुस्तक से साभारद्ध

गुरु नानकदेव जी की विश्वव्यापी यात्राएँ

डाॅ. हरबंस कौर सागू

यात्राओं का उद्देश्यः-

गुरु नानकदेव जी की बाणी को पढ़ने और उनके जीवन के विवरण को पढ़ने और समझने के बाद, एक बात स्पष्ट हो जाती है कि जीवन भर उनका दृष्टिकोण मानवतावादी और आत्मपरक रहा है। बचपन में जब वे पढ़ रहे थे, जब वे सामाजिक रीति-रिवाजों और कर्मकांडों का पालन कर रहे थे, जब वे वैद्य को बीमारी दिखा रहे थे, जब वे काम कर रहे थे, उन्होंने किसी भी देहधारी व्यक्ति को सर्वशक्तिमान नहीं माना, और न ही उन्होंने हिंदू या मुस्लिम के अलगाव पर विचार किया। उनके लिए पंडित-मुल्ला, मंदिर-मस्जिद और आरती-नमाज एक समान ही थे। यह सर्वव्यापी, व्यक्तिगत-व्यवहार ही था जिसने हर जगह गुरु नानकदेव जी के मान-सम्मान को बढ़ाया। गुरु नानक देव जी की मानसिक स्थिति में परिवार और अन्य सांसारिक जिम्मेदारियों के साथ-साथ दुनिया की मानवता को भ्रम और पाप से मुक्त करना, सांसारिक रहस्यों को ठीक करना एक महान दायित्व था। अपनी विश्व यात्र से पहले, वह जागरूकता लाने के लिए तलवंडी और सुल्तानपुर के आसपास के क्षेत्रों में उपदेश देते रहे थे, लेकिन वे हमेशा मानवीय सिद्धांतों पर अपनी शिक्षाओं के दायरे का विस्तार करने के तरीकों के बारे में सोचते थे। वे किसी विशेष जनजाति, किसी विशेष शहर या किसी विशेष प्रांत से उधार लेने नहीं आए थे। उसकी नजर सारी दुनिया, सारी कौमों और सारे देश पर पड़ी। उन्होंने हर तरफ से शोक, पीड़ा और संकट की आवाजें सुनीं। तृष्णाओं में सारा संसार जलता हुआ प्रतीत होता था, इसीलिए सारा संसार उनके मिशन का कार्यक्षेत्र बन गया।

'बाबा देखे धियान धर जलती सभ पृथ्वी दिस आई.'1

गुरु नानक के भगवान एक थे और सभी के लिए सांझे थे, वह अकाल पुरख किसी एक देश या जाति के नहीं बल्कि पूरी मानवता के थे। उनके लिए सभी मनुष्य समान थे, पाँच तत्वों से बने, सभी मनुष्यों का अस्तित्व उसी निरंकार के आत्मज्ञान के कारण है। इसलिए उन्होंने इन शिक्षाओं का प्रचार करने के लिए घर, परिवार, बच्चों, पत्नी, माता-पिता, भाई-बहनों को कुछ समय के लिए छोड़ने का फैसला किया। जहाँ उन्होंने तलवंडी की जमीन को 32 साल तक निहाल किया, वहीं सुल्तानपुर में करीब साढ़े चार साल काम करके दौलतखान लोधी जैसे और अन्य को भी राजी किया। भाई गुरदास जी के अनुसार 'चढड्ढा सोधन धरत लुकाई'2, क्योंकि उन्होंने हर जगह असत्य का राज्य देखा और सच्चे धर्म और शर्म की कीमतें उड़ती देखीं।

परन्तु आप प्रबल अराजकता के स्थान पर, सच्चे धर्म और

लज्जा के दैवीय मूल्यों को प्रधान बनाना चाहते थे। दैवीय मूल्यों की सर्वोच्चता को स्थिर और सुरक्षित रखने के लिए परस्पर सौहार्द भी जरूरी था। इसलिए, गुरु नानक के शब्द 'न हिंदू और न ही मुसलमानय् सुल्तानपुर के लोगों को बहुत अजीब और आश्चर्यजनक लगे। यद्यपि इस भाषण में प्रेम और आग्रह था, सदियों से लुप्त हो चुकी साझी संस्कृति को पुर्नजीवित करने का सपना था, हिन्दू-मुसलमानों को मानवता और आत्म-स्तर पर एक साथ आने की प्रेरणा भी थी, लेकिन इस क्रांतिकारी आवाज को कौन सुनता? यदि वह मुल्ला सुनेगा, तो उसकी शरीयत और प्रभाव क्षमता नष्ट हो जाती, यदि वह ब्राह्मण बात सुनेगा, तो उसके पाप और पाखंड का पर्दाफाश

हो जाएगा और यदि वह योगी बात सुनेगा, तो उसकी मांग कर खाने की इच्छा समाप्त हो जाएगी और उसका चमत्कारी प्रभाव खत्म हो जाता। समकालीन धार्मिक नेताओं में से कोई भी सांप्रदायिक सद्भाव को बढ़ाने की हिम्मत नहीं रखता था।

कादी कूड बोलि मल खाई.। ब्राह्मण नावै जीआ घाई.। जोगी जुगत णा जाणे अंध।। तीने उजाड़े का बंध।3

सद्भाव की बात सुनने को कोई तैयार नहीं था। यही कारण है कि सभी हिंदुओं और मुसलमानों को गुरु नानक देव जी का यह नारा किसी राक्षसी या मानसिक झुकाव का प्रतीक लगा। इसलिए किसी ने आपके बारे में कुछ कहा तो किसी ने कुछ। आपने सभी अक्षम शब्दों को सुना और कहाः

कोई आखे भूतना को कहे बेताला। कोई आखे आदमी नानक वेचारा। भएया दीवाना साहा का नानक बौराना। हऊ हरि बिनु अवर ना जाना।4

गुरु नानक देव जी को हिंदुओं और मुसलमानों का धार्मिक भेदभाव बिल्कुल पसंद नहीं था। वे पक्षपात और अलगाव को सिरे से खारिज करते हुए उसकी भत्र्सना करते थे। अपनी बाणी में उन्होंने मनुष्यों का आपसी मेलजोल और आत्मा और ईश्वर के मिलन पर जोर दिया। इसके अलावा, उनकी बाणी मानवतावादी व्यत्तिफत्व के चरित्र का वर्णन करने पर जोर देती है। ये सभी दैवी गुण एक सिद्ध और सच्चे व्यत्तिफत्व के निर्माण में सहायक सिद्ध होते हैं। वास्तव में गुरु नानक देव जी ने एक सच्चे व्यत्तिफत्व के निर्माण के लिए ही अपनी विश्व यात्र शुरू की थी।

उन्होंने पहली बार संसार-भ्रमण का विचार अपने पिता मेहता कालू के साथ तब साझा किया जब वह केवल 20 वर्ष के थे। जब

उन्होंने अपने पिता से तीर्थ यात्र पर जाने की अनुमति मांगी तो मेहता जी ने कहा कि आपकी अभी-अभी शादी हुई है, तीर्थयात्र पर जाने के लिए बहुत उम्र पड़ी है5, यह बात सुन कर गुरु जी चुप हो गए क्योंकि अभी भाई मरदाना भी साथ चलने के लिए तैयार नहीं था क्योंकि उसने अपनी जवान बेटी के विवाह की बात की और कहा कि वह इससे पहले कहीं नहीं जा सकते। गुरु जी ने इस इच्छा को थोड़ा आगे बढ़ा दिया और सही समय की प्रतीक्षा करने लगे।

एक बार मेहता कालू ने भाई मरदाने को गुरु नानक जी का पता खोजने के लिए सुल्तानपुर भेजा और मरदाने ने अपनी बेटी की शादी के लिए मदद मांगी तब गुरु जी ने भाई भागीरथ को कह कर लाहौर के भाई मनसुख से वह सब वस्तुएँ मंगवा दी जिनकी मरदाने को जरुरत थी। मरदाना शादी का सामान लेकर तलवंडी आया और अपनी बेटी की शादी के बाद सुल्तानपुर गुरु साहिब के पास लौट आया।

वई नदी में प्रवेश की घटना के बाद गुरु जी ने मोदीखाना की नौकरी छोड़ दी और कोषागार से प्राप्त सारा धन गरीबों में बाँट दिया और विश्व भ्रमण के लिए पूरी तरह से तैयार हो गए, और भाई मरदाना को भाई फरिंदे के पास से रबाब भी ले कर दी। रबाब खरीदने के लिए पैसा बेबे नानकी जी ने दिया था। उन्होंने माता सुलखनी जी और श्री लखमी चंद को मायके भेज दिया और कहा कि वे जब चाहें तलवंडी और सुल्तानपुर जा सकते हैं। माता जी ज्यादातर तलवंडी में ही रही थीं (अपने ससुराल, पति के घर) श्री चंद जी की देखभाल बेबे नानकी जी ने की थी।

गुरु नानक देव जी की उदासियों (यात्राओं) का उद्देश्य पृथ्वी पर रहने वाले प्राणियों को परिष्कृत और प्रबुद्ध करना था। यह उद्देश्य अपने आप में बहुत ही रचनात्मक और महत्त्वपूर्ण था। साथ ही मानवता के लिए भी फायदेमंद था। इसलिए, गुरु नानक ने जो

उदासी की रीत चलायी, उस उद्देश्य के लिए बड़े साहस के साथ, उन्होंने पहले पूरे पंजाब में, पिफर भारत में और पिफर भारत के बाहर प्रचार किया। यद्यपि मध्य युग में किसी भारतीय का भारत से बाहर जाना

एक क्रांतिकारी घटना माना जाता था, गुरु नानकदेव जी ने ऐसा करने में संकोच नहीं किया। उन्होंने बड़े साहस और निडरता के साथ हर जगह उदासी के नारे लगाए। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए भले ही उन्हें अपने सांसारिक वस्त्र उतारकर उदासी-भेष धारण करने पड़े। उन्हें उदासी के पहनावे में देखकर उनके पिता और परिवार को कुछ दुःख हुआ होगा लेकिन उद्देश्य इतना महान और रचनात्मक था कि पिता परिवार और उनके अपने परिवार ने अंततः गुरु नानक को इस उद्देश्य की सफलता के लिए आशीर्वाद और प्रोत्साहन के साथ आशीर्वाद दिया होगा।

सैयदपुर (सैदपुरद्धः

ऐसा लगता है कि लंबी यात्र गुरु नानक देव जी ने सैदपुर से शुरू की थी, जिसे अब एमिनाबाद कहा जाता है। बढ़ई भाई लालो

यहीं रहते थे। गुरु जी भाई लालो के साथ रहे और भाई मरदाना तलवंडी अपने परिवार से मिलने गए।

यहाँ रहते हुए गुरु जी प्रातःकाल घर से निकल जाते थे और अपने शरीर को लंबी यात्र के लिए तैयार करने के लिए घोर तपस्या

करने लगे। जहाँ उन्होंने रोड़ियाँ बिछाकर तपस्या की थी, वहाँ गुरुद्वारा रोड़ी साहिब स्थापित है। यह जगह पाकिस्तान में है।

यहीं रहते हुए उसकी मुलाकात सैयदपुर के जागीरदार मलिक भागो से हुई। वह लोगों पर बहुत जुल्म करता था और लोग इससे बहुत परेशान थे। उसने ब्रह्मभोज का आयोजन किया था और गुरु जी को भी आमंत्रित किया गया, लेकिन वे ब्रह्मभोज के लिए नहीं गए और जब बुलाने पर गुरु जी भाई लालो के साथ मलिक भागो के पास गए और उसने पूछा कि वह ब्रह्मभोज में क्यों नहीं आए, इसका उत्तर देते हुए गुरु जी ने कहा कि हम आपके व्यंजनों में गरीबों का खून देखते हैं और जब पूछा गया कि वे निचली जाति के लालो के घर में क्यों रहते हैं तो आपका जवाब था कि भाई लालो जिसे आप शुद्र कहते हैं, हम उसकी रोटी पर विश्वास करते हैं, क्योंकि वह दस उँगलियों से अर्थात् कड़ी मेहनत से काम करता है। कुछ दिनों बाद जब मरदाना तलवंडी से लौटे तो गुरु नानक ने भाई लालो से अनुमति ली और आगे बढ़े।

पाकपट्टठ्न:

उस समय सैयदपुर (सैदपुरद्ध से पाकपट्टठ्न तक का मार्ग सैदपुर से लाहौर और लाहौर से मुलतान तक सड़क के माध्यम से था और रावी नदी पर नाव द्वारा पहुँचा जा सकता था। तुलम्बा शहर रावी के दोनों किनारों पर आता था। इसका वर्तमान नाम मखदुमपुर है। कस्बे के बाहर सज्जन नाम के एक ठग ने एक सराए बनायी हुई थी और उसमें एक ठाकुरद्वारा (मन्दिरद्ध और एक मस्जिद बनायी हुई थी। बाहर, हिंदुओं और मुसलमानों द्वारा पीने के लिए पानी के अलग-अलग

घड़े रखे गए थे। जब गुरु जी मरदाने सहित इस स्थान पर पहुँचे तो सज्जन ने रात को रोटी खिलायी और सभी प्रकार की सेवा की और अनुरोध किया कि वह थक गए हैं और कुछ रात आराम करने के लिए कहा। गुरु जी उसके इरादे जान गए और मरदाने को रबाब बजाने के लिए कहा और उन्होंने निम्नांकित शब्द का गायन किया

ः

ऊजल कैहा चिलकना घोटिम कालड़ी मसु।। धोतिया जूठी न उतरै जे सऊ धोवा तिस।।6

वह सज्जन सोचने लगे कि इस शब्द में वर्णित ये सभी अवगुण मुझमें मौजूद हैं। तब उसकी समझ में आया कि यह फकीर दिल को जानने वाला है।7 वह गुरु जी के पैर पकड़ कर बहुत रोया और अपनी भूल को क्षमा करने की प्रार्थना करने लगा, और आगे से सचमुच का सज्जन बन कर लोगों की सेवा के लिए अपना सबकुछ अर्पित कर दिया। उसने अपनी धर्मशाला को सच्चा धर्मसाल बना लिया और आने वालों की सेवा करने लगा। रात में गुरु जी और मरदाना ने उसके यहाँ विश्राम किया, सज्जन ठग को सज्जन बना दिया और आगे बढ़ गए।

पाकपट्टठन में शेख इब्राहिम के साथ मेलः

गुरु नानक साहिब तुलम्ब से हड़प्पा आए और पिफर शोरकोट से डेरा इस्माइल खान और पाकपट्टठम पहुँचे। शहर के बाहर डेरा डालने के बाद, उन्होंने मरदाने को रबाब बजाने के लिए कहा और निम्नलिखित श्लोक का कीर्तन शुरू कर दिया। वर्तमान में शेख ब्रह्म,

जिनका पूरा नाम शेख इब्राहिम था, शेख फरीद जी के सिंहासन पर विराजमान हैं, लेकिन जन्म-साखियों में यह नाम केवल शेख ब्रह्म के लिए लिखा गया है। शेख ब्रह्म का एक अनुयायी जिसका नाम शेख कमाल था, लंगर के लिए लकड़ी इकट्टठा कर रहा था। जब उसने देखा कि दो फकीर कीर्तन कर रहे हैं, तो वह आया और वहीं बैठ गया, जब उसने इस श्लोक का कीर्तन सुना।

'आपे पट्टठी कलम आपि उपरि लेखु भी तूं।। इको कहै नानका दूजा कहे कू।।8

शेख कमाल बहुत प्रभावित हुए और खानगाह में जा कर अपने सिर से लकड़ियाँ उतारी और शेख इब्राहिम से कहा कि कोई दो फकीर आए थे जो ईश्वरीय-एकता के गीत गा रहे थे। इब्राहिम ने कमाल से पूछा, फ्ये फकीर हिंदू हैं या मुसलमान?य् तब कमाल ने कहा कि हिंदू हैं। इब्राहिम को आश्चर्य हुआ कि क्या कोई हिंदू ईश्वर की एकता में इतना विश्वास कर सकता है। अगले दिन इब्राहिम भी कमाल के साथ आए और गुरु जी और मरदाने को अपने साथ खानगाह ले गए और गुरु जी से पूछा कि वे हिंदू हैं या मुसलमान ? तो गुरु नानक देव जी ने कहा कि मैं पाँच तत्वों की मूर्ति हूँ और ये पाँच तत्व हिंदू-मुसलमान में एक ही हैं और दोनों मनुष्य ही हैं। हिंदुओं और मुसलमानों के लिए भगवान की पूजा करने के दो तरीके हैं, लेकिन उन दोनों का लक्ष्य एक ही है। शेख इब्राहिम गुरु जी से बहुत प्रभावित हुए और शेख ने निम्नलिखित शब्द कहे और उनसे उनका आंतरिक अर्थ समझाने को कहा।

बेड़ा बन्धि न सकियुं बंधन की बेला। भरि सरवर जब ऊछलै तब तरण-दुहेला। हथ न लाई कोंसुभ्ड़े जलि जासी ढोला। इक आपिनै-पतली शह केरे बोला।

दुधा थणी न आवई पिफरि होई न मेला। कहै फरीद सुहेलिहो सहु अलाएसी।

हंस चलसी डुमणा अहि तनु ढेरी थीसी।9

इस शब्द की व्याख्या गुरमत दृष्टिकोण से गुरु नानक देव जी ने अपने इस श्लोक द्वारा की।

जप तप का बंध बेधाला जितु लंघाहि वहेला। ना सरवर ना ऊछ्ले ऐसा पन्थ सुहेला।

तेरा इको नाक मंजीठडा रता मेरा चोला सद रंग ढोला।10

शेख इब्राहिम गुरु से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने गुरु को कई दिनों तक खानगाह में रखा और सेवा की। गुरु जी के अनुरोध पर, उन्होंने फरीद जी की सारी बाणी दे दी, जो गुरु ग्रंथ साहिब में संकलित है। गुरु नानक देव जी ने भी बड़ी विनम्रता से उस बाणी का सत्कार किया। जन्मसाखी भाई बाला के संदर्भ में डाॅ. त्रिलोचन सिंह जी लिखते हैं कि, शेख इब्राहिम के अनुरोध पर, 'आसा की वार' की पौडिओं की रचना पाकपट्टठ्न में की गई और गुरु अर्जन देव जी ने गुरु ग्रंथ साहिब जी का संपादन करते समय इन पौडियों के साथश्लोक भी शामिल कर लिए। जन्मसाखी भाई मणि सिंह के संदर्भ से, डाॅ. त्रिलोचन सिंह जी लिखते हैं कि गुरु ग्रंथ साहिब का संपादन करते समय शेख इब्राहिम के डेरे की एक हस्तलिखित प्रति

भी गुरु अर्जन देव जी द्वारा मंगवायी गई थी।11 कुछ दिन यहाँ रह कर गुरु नानकदेव जी पूर्व की ओर यात्र को चल दिए।

कुरुक्षेत्राः

पाकपट्टठ्न से गुरु साहिब सतलुज नदी पार कर सरसा जाने वाले रास्ते पर निकल पड़े। गुरु नानक की याद में यहाँ एक पुराना गुरुद्वारा भी है। यहाँ से थानेसर जाते हुए गुरु जी भाई मरदाने के साथ करा और पहोवे होते हुए कुरुक्षेत्र पहुँचे। करा तहसील कैथल (जिला करनालद्ध पहोवे से सात मील पश्चिम में है। यहाँ राजा उदय सिंह ने गुरु जी की याद में एक गुरुद्वारा बनवाया था। पहोवा एक हिंदू तीर्थ है। सरस्वती नदी पहले यहीं से होकर गुजरती थी। कहा जाता है कि महाभारत के युद्ध के बाद पाडव भाइयों ने यहाँ आकर शुद्धि करवायी थी। यहाँ भी राजा उदय सिंह ने गुरु नानकदेव जी की स्मृति में एक गुरुद्वारा बनवाया था। यहाँ जो कुआं है वह गुरु नानक साहिब के समय का बताया जाता है, और बाद में गुरु हरगोबिन्द जी ने बऊली बनवायी थी।

कुरुक्षेत्र में कौरवों और पांडवों के बीच महान युद्ध हुआ था। जब गुरु नानक साहिब यहाँ पहुँचे तो सूर्यग्रहण लगा हुआ था। महाराजा रणजीत सिंह ने जिस स्थान पर वे बैठे थे, उस स्थान पर

एक गुरुद्वारा बनवाया था। यह गुरुद्वारा कुरुक्षेत्र तलाब के करीब है। गुरुद्वारा साहिब में एक कुआं छोटी ईंटों से बना है और इसलिए यह काफी पुराना प्रतीत होता है और इसका नाम गुरुद्वारा सिद्धबटी है।

यहीं पर एक राजकुमार और उसकी मां गुरु जी के पास पहुँचे थे। भाई मनी सिंह की जन्मसाखी में इसे पटना के राजा के रूप में लिखा गया है। डाॅ.कृपाल सिंह का मानना है कि यह राजा पटियाला के पास पटनपिंड से आया होगा। डाॅ.त्रिलोचन सिंह 'त्वारीख गुरु

खालसा' की गवाही देते हैं कि जगत राय, हांसी राज्य के राजा अमृत राय के पुत्र थे। इसने गुरु जी से आशीर्वाद माँगा कि इसे अपनी खोयी हुई रियासत का राज मिल जाए। गुरु साहिब ने कहा कि अगर वह संतों और गरीबों के लिए लंगर लगाते हैं तो भगवान उस पर दया करेंगे। लेकिन राजकुमार ने कहा कि उनके पास शिकार किए गए हिरण के अलावा कुछ नहीं है, इसलिए गुरु साहिब ने हिरण का मांस पकाने का फैसला किया। जब ऐसा किया गया तो धुंआ निकलता देख सारे पंडे खेत की ओर दौड़ पड़े और इस बात पर

झगड़ने लगे कि ग्रहण के दौरान यहाँ मांस क्यों पकाया जा रहा है। गुरु ने बहुत शांति से समझाया कि ग्रहण में लड़ाई-झगड़ा ठीक नहीं है। इन सब में से नानू पंडित बहुत तेज था और खुद को बहुत चालाक समझते था। इस पूरी बहस का सार गुरु साहिब ने अपने शब्दों में दिया है।

पहिला मसहु निमिया मासै अंदरि वासु।

जीऊ पाई मासु मुहि मिलिया हड चमु तन मासु।13 और

मास मास करि मूरख झगड़े गियान धियान नही जाने। कौउन मासु कौउन साग कहावै किसु महि पाप समाने।14 जब उन्होंने गुरु जी से इन शब्दों का अर्थ समझा, तो नानू

पंडित और उनके अन्य साथी गुरु जी से बहुत प्रभावित हुए और उनके अनुयायी बन गए।

हरिद्वारः

कुरुक्षेत्र से, गुरु साहिब ने वर्तमान पिपली मार्ग से जमुना को पार किया और गंगा के तट पर पहुँचे, जिसे हरिद्वार के नाम से जाना जाता है। गुरु साहिब जाकर हर की पौड़ी से करीब डेढ़ मील दूर बैठ गए। वह जिस स्थान पर ठहरे थे, उसे 'नानकवाड़ा' कहा जाता है। पहले यहाँ एक पुराना ईंट का बना गुरुद्वारा हुआ कर्ता था, जो आजकल दिखाई नहीं देता है। आप यहाँ बैसाखी के पर्व पर हरिद्वार पहुँचे थे। तीर्थयात्री गंगा में खड़े होकर पूर्व की ओर मुंह करके सूर्य को जल दे रहे थे। आप गंगा में खड़ा हो कर और पश्चिम की ओर जल देने लगे। जब कुछ लोगों ने आपसे पूछा कि आप पश्चिम की ओर पानी क्यों दे रहे हैं? तो गुरुजी ने पूछा कि तुम पूरब को पानी क्यों देते हो? फ्हम अपने पितरों को पानी दे रहे हैं,य् उन्होंने कहा। जब गुरु ने पूछा कि पूर्वज कहाँ थे तो उन्होंने कहा कि देवलोक में 49 करोड़ कोस पर है। यह सुनकर गुरु जी ने कहा कि लाहौर के पास मेरे खेत हैं और मैं अपने खेत में पानी दे रहा हूँ ताकि खेत सूख न जाए। सब हँसने लगे और कहने लगे कि लाहौर कहाँ है और हरिद्वार कहाँ है। गुरु जी कहने लगे कि अगर आपका दिया हुआ पानी करोड़ों कोस तक पहुँच सकता है तो लाहौर तो यहाँ से 200-250 मील की दूरी पर ही है, तो वहाँ पानी क्यों नहीं पहुँच सकता? तीर्थयात्रियों ने पूरी बात समझ ली और बहुत शर्मिंदा हुए और फोकट कर्मों के बारे में समझ गए और गुरु जी से क्षमा मांगी। गुरु साहिब ने उपदेश दिया कि इन फोकट के कार्यों में कोई फायदा नहीं है, पितरों को वही मिलता है जो उन्होंने अपने जीवन में दान-पुन्य किया है। वे सभी गुरु जी के चरणों में गिर पड़े और उनके शिष्य बन गए। गुरु जी कुछ समय के लिए हरिद्वार में रुके और पिफर चले गए।

नानकमत्ते:

गुरु नानक देव जी हरिद्वार से कनखल और पिफर पहाड़ी रास्ते से कोट-दुवार तक पहुँचे। 'चरणपादुका' नामक गुरु की स्मृति में

एक पुराना गुरुद्वारा है। कोट दुआर से वह खुद पहाड़ी रास्ते से सीधे श्रीनगर (पौढ़ीद्ध और पिफर यहाँ से गुरु साहिब बद्री नाथ और केदारनाथ गए। केदारनाथ से वर्तमान जोशीमठ रोड होते हुए अंतधुर दर्रे से लेपुलेख के पास पहुँचे। लेपुलेख से गुरु साहिब शारदा नदी के किनारे अल्मोड़ा पहुँचे। अल्मोड़ा से एक पहाड़ी सड़क पर, दक्षिण की ओर हल्द्वानी, मंडी और लगभग 33 मील पूर्व में दुर्गा पीपल के माध्यम से एक जंगल में जिसे जोगियों का स्थान कहा जाता है, वहाँ गुरु जी पहुँच गए। गुरु जी जिस स्थान पर बैठे थे वह अल्मोड़ा से लगभग 25-30 मील पूर्व में है। इस जगह को अब 'रीठा साहिब' कहा जाता है और यहाँ गुरु जी की याद में गुरुद्वारा साहिब भी बनाया गया है।

16वीं शताब्दी के प्रारंभ तक पूरा क्षेत्र योगियों के मठों से भर गया था। उस समय पंजाब के उत्तरी भाग में कनफटे जोगियों का प्रबल जमाव था, जो सभी गोरख नाथ के अनुयायी थे। अल्मोड़ा के आस-पास यह मठ बना कर रहते थे।

जब गुरु जी इस स्थान पर पहुँचे तो मरदाना जी को बहुत भूख लगी और जब उसने योगियों से कुछ खाने के लिए कहा तो उन्होंने

मना कर दिया। गुरु साहिब ने मरदाने को कहा कि हम जिस पेड़ के नीचे बैठे हैं, वह उस पेड़ का फल खा ले। मरदाना उस पेड़ पर चढ़ गया और लगा रीठे खाने, जो कडवे होने के बजाय मीठे थे। मरदाने ने पेट भरकर खाए और उस स्थान का नाम भी 'रीठा साहिब' पड़ गया और लोग बड़ी श्रद्धा के साथ रीठा का प्रसाद लेने और दर्शन करने के लिए दूर-दूर से यहाँ आते हैं।

गोरख मत्ता या सिद्ध मत्ता, रीठा साहिब से लगभग 70 कि.मी. दूर है। यहाँ से गुरु साहिब सिद्ध मत्ते पहुँचे और एक पीपल के नीचे बैठ गए। यहाँ बैठकर गुरु साहिब ने मरदाने को धूणी जलाने को कहा।

मरदाना लकड़ी इकट्टòा करके जोगियों के पास आग लेने गया, लेकिन उन्होंने आग देने से इनकार कर दियाऋ पर किसी तरह मरदाना आग लाने में सफल हो गया और उसने धूणी जलायी। कहते हैं कि उस रात बहुत बारिश और आंधी-तूफान आया। सारी धूनियाँ बुझ गई और सिपर्फ गुरु नानक देव जी की धूणी ही जलती रही। सुबह उठकर जब पानी की जरूरत पड़ी तो मरदाना पानी मांगने गया और जोगियों ने पिफर मना कर दिया। गुरु नानकदेव जी मरदाने को उत्तर की तरफ जाने के लिए कहा। मरदाना दो या तीन फर्लांग पर गया और एक नदी से पानी लाया। (एक कहावत के अनुसार गुरु नानक साहिब ने अपनी आत्मिक शत्तिफ से मर्दाने को एक फोड़ी दे कर, यह नदी पहाड़ों से मंगवायी थीऋ इसलिए इसका नाम फोड़ी गंगा है। द्ध यह पूरी नदी अब दीउहा बांध में आ गई है। स्थानीय सिखों के आग्रह पर, उत्तर प्रदेश सरकार ने फोड़ी गंगा के कुछ झरनों को एक कुएँ में बदल दिया है और इसकी दीवारों को एक पुल के माध्यम से बांध से जोड़ दिया है। कुएँ के दोनों ओर सीढ़ियाँ बनाई गई हैं ताकि तीर्थयात्री नीचे उतर कर चरणामृत ले सकें। बांध के साथ जो पानी

एकत्र किया गया है उसका नाम 'नानक सागर' है।

जब सिद्ध-जोगियों ने देखा कि उनकी ईष्र्या और शत्रा ुता का गुरु जी पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा है, तो वे चकित हो गए और उनके पास जाकर प्रश्न पूछने लगे कि आपका गुरु कौन है? और किससे आपने दीक्षा ली है? गुरु ने एक शब्द सुनायाः

कऊन तराजी कवण तुला तेरा कवण सराफ बुलावा..।। मन तराजी चित्त तुला तेरी सेव सराफ कमावा।

घट ही भीतर सो सहु तोली इन बिध चित रहावा। आपे कंडा तोलु तराजी आपे तोलण हारा।15

आपे देखे आपे बूझे आपे है वंजारा। अंधला नीच जाति परदेसी आवे तिल जावै।

ता की संगति नानक रहदा कियूं कर मूड़ा पावै।16

उपरोत्तफ श्लोक में गुरु साहिब ने अपनी शब्दावली में अपनी बात स्पष्ट की थी। योगियों की इस बात से संतुष्टि नहीं हुई और वे गुरु जी को जोगी बनने के लिए प्रेरित करने लगे। तो पिफर गुरु जी ने शब्द पढ़ाः

जोग न खिंथा जोग न डंडे जोग न भस्म चढ़ाइए।17

उपरोत्तफ शब्द में गुरुसहिब ने उनकी शब्दावली में अपना दृष्टिकोण स्पष्ट किया था। जोगी समझ गए और उन्होंने गुरु जी को

नमस्कार की। गुरु जी कुछ दिन वहाँ रहे, जोगियों के साथ संवाद किया और पिफर आगे चल दिए।

टांडे:

गुरु नानकदेव जी नानक मत्ते से तकरीबन 60 मील दक्षिण की ओर वन्जारियों (व्यापारियोंद्ध के टांडे पहुँचे।। यह नगर अब मुरादाबाद से नैनीताल की सड़क पर है। यहाँ उन्होंने व्यापारी के प्रति एक शब्द का उच्चारण किया फ्पहिले पहरे रैन के वंजरिया मित्रा, हुकमी पयिआ गरभासिय् यहाँ कुछ दिन रुक कर और पिफर अयोध्या की ओर मुड़ गए।

अयोध्या:

डाॅ.त्रिलोचन सिंह और प्रधानाचार्य सतबीर सिंह जी ने गुरु साहिब के पहले प्रयाग या इलाहाबाद जाने का और बाद में अयोध्या जाने का जिक्र किया लेकिन डाॅ. कृपाल सिंह जी ने सबसे पहले अयोध्या जाने का उल्लेख किया है, जो ज्यादा ठीक लगता है। लेखिका भी कृपाल सिंह जी के मार्ग को ठीक मानती है। टांडा से, गुरु साहिब खीरी जिले के एक नगर गोला पहुँचे, और वहाँ से चैकी दरिया (ब्रह्मघाट के पास घाघरा नदी में चैकी नदी का विलय हो जाता हैद्ध के पार नाव से और पिफर घाघरा नदी से होते हुए, मरदाने के साथ अयोध्या पहुँचे। अयोध्या में जहाँ आप जाकर बैठे थेॠ वहाँ

एक गुरुद्वारा बना हुआ है। यहाँ भी विभिन्न संप्रदायों के लोगों ने गुरु जी से कई प्रश्न पूछे कि कई लोगों ने शरीर को दर्द देकर, नग्न रहकर, उल्टा लटककर या यहाँ तक कि बड़ी तपस्या, यज्ञ और पुन्य-दान भी कहते हैं कि मोक्ष इनका ही होगा? कुछ देर तो गुरु जी चुप रहे और पिफर यह शब्द उचरित कियाः

जगन होम पुन्न तप पूजा देह नित दुःख सहे।

राम नाम बिन मुकति न पावसी मुकति नामि गुरमुखि लहै।18

प्रयाग:

अयोध्या से गुरु साहिब घागरा नदी से होते हुए टांडा, (जिला फैजाबाददद्ध अयोध्या से 37 मील पूर्व में, यह एक प्रसिद्ध बंदरगाह था। यहाँ व्यापारी आते जाते थे। यहाँ से 12 मील पैदल चलकर मिझोली के इलाके पहुँचे जहाँ टानस नदी का बंदरगाह था। गुरु साहिब नाव से निजामाबाद (आजमगढ़ जिलाद्ध पहुँचे। यह टानस नदी के किनारे, गुरु साहिब की याद में गुरुद्वारा भी बनाया गया है। निजामाबाद प्राचीन काल से ही गुर-सिख धर्म का केंद्र रहा है। टानस नदी से लगभग एक फर्लांग पर गुरु साहिब के बैठने की जगह बतायी जाती है और यहाँ एक गुरुद्वारा भी है। प्रयाग, त्रिवेणी संगम निजामाबाद से लगभग 90 मील की दूरी पर है। निजामाबाद से लौटते हुए, प्रयाग नगर की भीड़ से कुछ ही दूरी पर गुरु साहिब रास्ते में ही झूसी रुक गए। कहा जाता है कि जहाँ गुरु साहिब बैठे थे, वहाँ

एक थड़ा (बैठे की जगहद्ध था जो समय के साथ गंगा नदी में खो गया।

एक बार गुरु जी अपने ध्यान में लीन गंगा तट पर बैठे थे, और कुछ तीर्थयात्राी जो त्रिवेणी स्नान करके आए थे, गुरु के चेहरे पर नूर देखकर, उनके पास आकर बैठ गए। जब गुरु साहिब ने उनकी ओर देखा तो उन्होंने कहा कि हम रोज पाठ पूजा करते हैं लेकिन

कोई असर नहीं होता और कोई रस नहीं आता। गुरु साहिब ने समझाया कि काम, क्रोध, लोभ, मोह, अभिमान, शरीर से जुड़े हुए विषय-विकार वास्तविक रस का आनंद नहीं लेने देते। यह सुनकर

यात्राी बहुत प्रभावित हुए और नमस्कार कर, आगे बढ़ गए।

एक दिन कुछ तीर्थयात्राी आए और उन्होंने बड़े आदर के साथ कहा कि लोग विभिन्न प्रकार के मानसिक विकारों से पीड़ित हैं, लेकिन पिफर भी मानसिक विकार ठीक नहीं होते हैं। गुरु ने बहुत ही शांति और प्रेम से कहा कि मन के विकार केवल मन में नाम बसाने से ही दूर हो जाते हैं और उन्हीं को इस दुनिया में महिमा मिलती है।

'नानक ता कौ मिले वडयाई जिस घट भीतर शब्द रवै'19

यह सुनकर सभी तीर्थयात्राी प्रसन्न हुए और गुरु साहिब को कोटि-कोटि प्रणाम किया और गुरु साहिब कुछ दिनों तक यहाँ रहे और पिफर पूर्व की ओर चल पड़े।

बनारसः

पुरानी झूसी से एक सड़क निकलती थी जो गंगा नदी के उत्तरी किनारे पर बनारस की ओर जाती थी। यह सड़क मुसलमानों के आने से पहले से मौजूद थी। वैसे, प्रयाग से बनारस के लिए नाव से ही आवाजाही होती थी। बनारस प्रयाग से 89 मील दूर है। इसी रास्ते से गुरु जी प्रयाग से बनारस पहुँचे। वर्तमान बनारस रेलवे स्टेशन से कुछ ही दूरी पर, कामछा क्षेत्र में, गुरु नानक की स्मृति में एक

ऐतिहासिक गुरुधाम है, जिसे बहुत पुराना माना जाता है। स्थानीय परंपरा के अनुसार, गंगा राम ब्राह्मण सबसे पहले गुरु के पास गए और उनसे बहुत प्रभावित हुए और सिख बन गए। 'सूरज प्रकाश' के लेखक भाई संतोख सिंह के अनुसार काशी निवासी हरि लाल और हरि कृष्ण गुरु अर्जुनदेव जी से मिलने आए थे। भाई काहन सिंह के अनुसार, उन्होंने बनारस के आसपास सिख धर्म का बहुत प्रचार किया। ये दोनों गंगा राम ब्राह्मण के पौत्र थे।

एक दिन गुरु जी गंगा तट पर बैठे थे, वहाँ बहुत सारे पंडित पुस्तकें पढ़ रहे थे, कई शिष्य उनसे सीख रहे थे। कई तपस्या कर रहे थे और कई शमशान की धूल मुंह और शरीर पर मलकर बैठे थे। गुरु जी को देखकर वे गुरु जी के पास आए और उनसे पूछा कि तुम क्या कर रहे हो? सभी भजन-पूजा या पठन-पाठन में तल्लीन हैं। जवाब में, गुरु ने शब्दों का उच्चारण किया।

दुबिधा न पडऊ हरी बिन होर पूजऊ मढ़े मसाणी न जाणी।। त्रिसना राची न पर घरि जावा त्रिसना नामि बुझाई.20

ये लोग गुरु से बहुत प्रभावित हुए और उनके चरणों में प्रणाम किया। एक दिन पंडित चतुर दास ने गुरु के पास आकर पूछा। फ्हे भगत, न तो तेरे पास शालिग्राम है, न तुलसी माला, न चंदन-टीकाॠ तो तुम किस प्रकार के भगत हो?य् जवाब में, गुरु जी ने इन शब्दों का पाठ किया।:

साल ग्राम बिप पूजी मानवहु सुकृत तुलसी माला। राम नाम जपि बेड़ा बाधहु दया करहु दयिआला।। ... बगुले ते फुनि हंसुला होवै जे तूं करहि दयिआला प्रणवती नानक दासनी दास दया करहु दयाला।।21

शब्द सुनते ही उन्हें एहसास होने लगा कि अगर सालग्राम,

तुलसी की माला को भत्तिफ का प्रतीक मानते हैं तो ये भत्तफ इसे मिट्टठी की दीवार को सींचने जैसा प्रयास मानते हैं। उन्होंने भत्तिफ के सच्चे साधनों का भी वर्णन किया। जिसमें कर्मों के रूप में अच्छे कर्मों का बीज धरती में बोया जाता है, अगर बंदगी से सींचा जाए तो यह बगुला भी परमहंस बन जाएगा। चरण दास गुरु के चरणों में गिर पड़े। यहाँ के पंडित को अपनी शिक्षा पर बहुत गर्व था। उनके प्रति भी उन्होंने इन शब्दों का भी उच्चारण किया।

पढ़ी पढ़ी गढ़ी लदियाह पढ़ी पढ़ी भरिह साथ। पढ़ी पढ़ी बेढ़ी पाइए पढ़ी पढ़ी गढ़िये खात..।। नानक लेखे एक गल, होरु हुमई झकना झाक।22

गुरु नानक देव जी ने बहुत शुद्धि रखने के प्रति भी पांडे को बहुत विवेकपूर्ण होने का निर्देश दिया।

सूचे एहि न आखिए बहनि जे पिंडा धोई सूची सेई नानक जिन मनि वास्या सोइ।23

यहीं पर गुरु ने लकड़ियों को धोकर, जलाने वालों को निर्देश दिया थाः-

जे करि सूतक मनिए, सब ते सूटक होई.। गोहे अते लकड़ी अंदरि कीड़ा होई.।

जेते दाने अन्न के जीया बाझ न कोई.।24

गुरु जी जितने दिन बनारस में रहे, वे पंडित के साथ संवाद करते रहे और कुछ दिन वहीं रहने के बाद वे आगे बढ़े।

चंद्रौली

बनारस से पटना तक सासराम के रास्ते को तब और अभी भी शेर शाह सूरी मार्ग कहा जाता है। बनारस से करीब 20 मील दूर चंद्रोली एक पुराना शहर है। उस समय यहाँ के राजा हरिनाथ थे।

यह विचार डाॅ. यह कृपाल सिंह जी का है। प्राचार्य सतबीर सिंह व डाॅ. त्रिलोचन सिंह का मत है कि हरिनाथ राजा बनारस के थे। गुरु जी गया जाते समय यहाँ आ गए। गुरु जी चुपचाप बैठे रहे और किसी से बात नहीं की और न ही कोई इशारा किया। उनके प्रभावशाली व्यत्तिफत्व को देखकर जहाँ शहर के लोग दर्शन करने आये, वहीं राजा हरिनाथ भी उस स्थान पर आ गए। उसे देखकर, गुरु ने निम्नलिखित शबद गायन किया।

जीऊ तपत है बारो बार। तपि तपि खपै बहुत बेकार। जै तनि बाणी विसरि जाई, जिऊ पक्का रोगी विल्लाई.25

राजा को लगा कि 'जिउ तपत है बारोबर, तपि तपि खपै बहुत बेकार' गुरु जी ने उनकी मनःस्थिति का वर्णन किया है। उसे बहुत वैराग्य महसूस हुआ और वह गुरु जी के चरणों में गिर गया, और प्रार्थना की कि गुरु जी उसे अपने पास रखें, उसने भी राज्य छोड़ने का मन बना लिया, लेकिन गुरु साहिब ने उपदेश दिया कि 'राज में

योग' होता है, आप लोगों की सेवा करो और नाम बाणी का ध्यान करो। गुरु ने कहा कि हमारा ज्ञान संसार को छोड़कर राज्य छोड़कर भीख मांगना नहीं है। गृहस्थी में रहकर सिमरन सेवा करना ही हमारा मत है। ऐसा करने से राज्य में ही मोक्ष की प्राप्ति होगी।

गया:

बनारस से चंद्रौली और सासाराम होते हुए गुरु साहिब गया

पहुँचे। यह फाल्गु नदी पर एक हिंदू तीर्थ स्थल था। यहाँ एक बड़ा विष्णु-पद मंदिर है, जहाँ पूरे भारत से श्रद्धालु आते थे। एक परंपरा के अनुसार, जिनके बुजुर्गों की मृत्यु हो गई है, अगर उन्हें मुक्त करने के लिए यहाँ पिंडदान किया जाता है, जिससे वे मुक्त हो जाते हैं। जब पिंडदान किया जाता था तो वे चावल की पिन्नी और दीपक जलाते थे और उनका मानना था कि ऐसा करने से उनके पूर्वजों की गति हो जाएगी। जब गुरुसाहिब ने फाल्गुई नदी के किनारे बैठ कर ध्यान कर रहे थे तब पंडों ने आकर उनसे कहा कि वे वे भी अपने पितरों की गति करवा लें। उन्होंने कहा कि हमने अपना और अपने पितरों का दिया करवा दिया है। ऐसा कृत्य किया है कि अज्ञानता का अंधेरा दूर हो गया है। स्वर्ग और नरक अज्ञान में हैं और नाम रूपी दीपक जगा लिया गया है। गुरु नानक साहिब ने वहाँ पण्डों को यह शब्द पढकर सुनाया।

दीवा मेरा एक नाम दुःख विचि पाइया तेल। ऊनी चानण उह सोखिया चूका जम सिउ मेल।26

इन शब्दों को सुनकर पंडित बहुत प्रभावित हुए और बड़े सम्मान से प्रणाम किया और चले गए। विष्णु पद मंदिर के साथ ही गुरु की स्मृति में एक गुरुद्वारा भी है। इस गुरुद्वारे का नाम देउ घाट है। इस गुरुद्वारे की सेवा बाबा अलमस्त जी ने गुरु हरगोबिंद साहिब जी के समय में की थी। यहाँ बाबा अलमस्त जी की मुहर भी पड़ी है। इस गुरुद्वारे में गुरु तेगबहादुर जी का एक हुकमनामा भी संरक्षित है। बुद्ध गया में, बाबा नानक को भिक्षु देवग्रिह मिला और वह गुरु साहिब का अनन्य भक्त बन गए। कहा जाता है कि वह भिक्षु गृहस्थ बना गया और उसका पौत्र भी गुरु हरिराय के दर्शन करने पंजाब आया। गुरु हर राय ने इसका नाम भगत भगवान रखा। (देखें डाॅ. त्रिलोचन सिंहद्ध यहीं से गुरु जी नालंदा और राजगृह गए। यह गया से कुछ ही दूरी पर है। गर्म पानी के झरने थे, हर जगह जहाँ भी कुएँ खोदे जाते वहाँ पानी गर्म ही निकलता था। वहाँ के लोगों ने अनुरोध किया कि गुरु जी ठंडे पानी के बिना कष्ट सह रहे हैं। गुरु साहिब के आदेश से जहाँ कुआं खोदा गया, वहाँ ठंडा पानी निकल आया। यह कुआं आज भी मौजूद है और एक छोटा गुरुद्वारा भी है। जिसे गुरु जी की याद में बनाया गया है। मुझे (डाॅ. हरबंस कौर सागूद्ध इस कुएँ और गुरुद्वारा साहिब के दर्शन करने का दो बार अवसर मिला। मुख्य परिचारक ने कहा, फ्हम संक्रांति के दिन कड़ाह प्रसाद बनाते हैं और इसे हमें ही खाना पड़ता है।य्

यहीं पर गुरु साहिब की मुलाकात कहलान शाह नाम के एक सूफी फकीर से हुई, जो गुरु साहिब से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने कई दिनों तक गुरु जी को अपने खानगाह में रखा। उस स्थान पर गुरुद्वारा बड़ी संगत विद्यमान है। जो स्थान सूफी संत का है उसे छोटी संगत कहा जाता है। बाद में गुरु तेगबहादुर भी यहीं रुके थे।27

हाजीपुर (पटनाद्ध

जब गुरु नानक साहिब यहाँ आए थे, उस समय पटना साहिब अभी आबाद नहीं हुआ था। कृपाल सिंह जी लिखते हैं कि उस समय

एक कच्ची सड़क पटना जाती थी। उस समय अशोक की राजधानी पाटलिपुत्र के पुराने शहर के खंडहर मौजूद थे। इन खंडहरों से होते हुए गुरु साहिब हाजीपुर पहुँचे। हाजीपुर, गंगा नदी के उत्तरी तट पर

आज के पटना शहर के सामने स्थित था जहाँ गंडक नदी गंगा नदी से मिलती है। गुरु नानक ने गंगा नदी को पार किया और उस स्थान पर बैठ गए जहाँ आज नानक का शाही गुरुद्वारा है। यह स्थान हरिहर

क्षेत्र के राम चैरा महल में स्थित है। भाई बाले की जन्मसाखी के संदर्भ में डाॅ. कृपाल सिंह जी लिखते हैं कि हाजीपुर पहुँचते ही मरदाने को बहुत भूख लगी और गुरु जी ने उसे कुछ मांगने और

खाने के लिए जवाहर टोला भेज दिया। जब मरदाना सालसराय जौहरी के घर गया तो वह रोटी खा रहा था। उसका लेखापाल अदरखा बाहर आया और मरदाना को उसके मालिक के पास ले गया। सालसा राय ने देखा कि वह आदमी भूखा था और उसे पहला प्रसाद दिया और उसे कुछ पैसे भी दिए। जब मरदाने ने गुरु जी से कहा कि उन अच्छे लोगों ने लंगर भी खिलाया है और यह पैसा भी दिया है, तो गुरु साहिब ने उन्हें पैसे वापस करने के लिए कहा। जब मरदाने ने पैसे लौटाए तो सालस राय जौहरी बहुत प्रभावित हुए और अपने लेखाकार अधरका को अपने साथ ले कर गुरु जी के दर्शन के लिए आए और प्रसाद के लिए पकवान भी लाए और कहने लगा कि मैं तो मरदाने को लाल समझता था पर आपके दर्शन करने पर तो सब तरफ लाल ही लाल है। गुरु ने कहा कि जिनकी आंखों में नाम रूपी लाल है, वे किसी और को नहीं देखते। गुरु के अमृत वचन सुनकर, सालस राय का मन शांत हो गया, उसने अभिवादन किया और भेंट स्वीकार करने को कहा। गुरु ने पकवान स्वीकार कर लिया लेकिन पैसे वापस कर दिए। गुरु ने सालस राय से कहा कि अधरखे में नाम प्रवेश कर रहा है और वह आध्यात्मिक रूप से उससे बड़ा है। इसलिए उसकी कदर की जानी चाहिए। यह सुनकर दोनों गुरु जी के चरणों में गिर पड़े।28

एक बार विष्णु के एक पुजारी ने गुरु नानक साहिब के पास आकर पूछा कि मन धन पदार्थ मांगता है और धन अहंकार के बिना प्राप्त नहीं किया जा सकता है और अहंकार से भगवान से दूर हो गया है। तो वह राम के पद तक कैसे पहुँचे तो उत्तर में गुरु जी ने

यह शब्द पढ़ा।

तन बिनसे धन का को कहिये। बिन गुर राम नाम कत लहिए। राम नाम धन संगी सहाई। अहनिस निरमल हरि लिव लाई।29

तब वैष्णव को शांति मिली और वह गुरु के चरणों में गिर पड़ा। गुरु ने अंत में कहा कि कोई दुर्लभ सालस राय जौहरी है जो दर्शन भेंट देकर जाता है। जिन्हें विधाता ने दृष्टि दी है, वे मानव जीवन के महत्व को समझते हैं, विषय विकारों में पड़ कर जीवन गंवाना ठीक नहीं है। ईश्वर की भक्ति, ज्ञान के बिना मनुष्य पशु के समान है। सालसराय में भीउत्साह और उमंग का फव्वारा फूट गया

और उसने गुरु उपमा में कहा

सतिगुरु दाता नाम का दीने खोल कपाट।

एक जो वनज वनंजिया बहुत न आवे घाट। सतिगुर नानक पूरा। बचन का सूरा।30

इसी सालस राय के वंशजों में से फतेह चंद मैनी दशवें पातशाह का परम भक्त हुआ, जिनके घर में दशवें पातशाह जाकर दूध की पूड़ियाँ, दूध से भीगे हुए छोले और तले हुए छोले खाते थे। उनके नाम की मैनी संगत आज भी विद्यमान हैं। अधरका के वंशजों में से घनश्याम, गुलाब राय, दसवें गुरु के मसंद, मूसा की संगत को आनंदपुर ले जाते रहे। जब सालस राय ने पिफर से मिलने का अनुरोध किया, तो उन्होंने जवाब दिया। 'गुरुमुखों को हमेशा दर्शन होते हैं'। जब उन्होंने 'आपकी खुशी कैसे प्राप्त करें' के बारे में बात की, तो गुरु जी ने कहाः-

जे चाहो प्रसन्नता

सेव करहु अधरका संता।31

उन्होंने पटना में लंगर की बुनियाद भी रखी। सब पंगत में बैठकर खाने लगे। यहाँ कुछ समय बिताने के बाद, गुरु साहिब और मरदाना आगे बढ़े। सालस राय ने अपने घर को एक धरम-साल बना दिया, और बाद में यहाँ गुरु तेगबहादुरजी, उनके परिवार को यहाँ छोड़ कर, स्वयं, असम की ओर राजा राम सिंह के साथ (सिख धर्मद्ध के प्रचार के लिए निकल गए। यहीं पर दसवें गुरु का जन्म हुआ था और आज यह सिक्खों का पाँचवें में से चैथा तख़्त है।

ढाकाः

पटना से गुरु नानकदेव जी कटियार तहसील के कंतनगर नगर में, गंगा के किनारे, प्रसिद्ध नगर करगोला के पास, गंगा नदी के तट पर पहुँचे। गुरु साहिब की याद में एक पुराना गुरुद्वारा है।

कंत नगर से पूर्व की ओर चले गए। जहाँ गंगा नदी दक्षिण की ओर मुड़ती है, वहीं उत्तर से बहने वाली महानंदा नदी इसमें मिल जाती है। इस क्षेत्र में गंगा का नाम कलंदरी है। कलंदरी और महानंदा नदियों के संगम पर मालदा नामक एक नगर था। यह शहर महानंदा और कलंदरी नदियों पर चलने वाली नौकाओं का एक प्रमुख केंद्र था। यहाँ गुरु जी कुछ समय के लिए रुके और यहाँ उनकी मुलाकात रामदेव (बाबूद्ध से हुई जो उनसे बहुत प्रभावित हुए, यहाँ से गुरु जी पूर्व दक्षिण के लिए रवाना हुए। गुरु जी उस सड़क (जी टीद्ध पर गंगा नदी के किनारे चले, जिसे बाद में शेर शाह सूरी ने पक्का किया था। यह सड़क मुर्शदाबाद (मकसूदाबाददद्ध से गुजरती हुई सुनारगाँव पहुँचती है। थोड़ी देर के लिए गुरु साहिब मुर्शिदाबाद में रुके, सुजा को जागृति प्रदान की और वह पुकार उठा।

सतिगुर नानक परसिया सभ पाप मिटाए। नाम अमोलक पाइया कारज भए रासे।

सुजे भगत की संगत मुर्शदाबाद में आज भी प्रचलित है। गुरु साहिब सुनारगाँव नहीं गए बल्कि दक्षिण की ओर चलकर ढाका पहुँचे। यहाँ देवी ढकेश्वरी देवी का मंदिर है, जिसके नाम पर शहर का नाम ढाका पड़ा। गुरु साहिब के समय, ढाका केवल देवी के अपने मंदिर के लिए प्रसिद्ध था और 1608 ईस्वी के बाद यह इस

क्षेत्र की राजधानी बन गया। ढाका बोही गंगा के तट पर था, और प्राचीन काल में बोही गंगा पप्रा की एक विशेष सहायक नदी थी। गुरु नानक साहिब ढाका में उतरे, जिसे अब रेयर बाजार कहा जाता है। वहाँ कुम्हारों के घर तब भी थे और आज भी। गुरु नानक के वहाँ जाने की परंपरा वहाँ के लोगों के बीच आज भी प्रचलित है। गुरु नानक साहिब के समय से एक कुआं भी है और कहा जाता है कि गुरु नानक साहिब ने अपनी छड़ी से जमीन खोदी और कुआं

खोदा। (जी. बी. सिंह-पंजाब पास्ट एंड प्रेजेंट, 1967, पृष्ठ 75द्ध

ढाका को ‘52 बाजार और 53 गलियाँ’ के नाम से भी जाना जाता था। ढाका में, गुरु जी के भक्तफों ने 12 संगतों का गठन किया, ये संगत इतनी व्यापक थीं कि आज का ढाका विश्वविद्यालय और अन्य मंदिरों का निर्माण इनसे जमीन खरीदकर किया गया। भैरव, कामाख्या और कब्र की पूजा से हटा कर परमेश्वर की भक्तिफ से जोड़ा। नाथे शाह की धर्मशाला के तीन अन्य गुरुद्वारे भी प्रसिद्ध हैं। आज यहाँ गुरु नानक शाही गुरुद्वारा सुशोभित है।

ढाका से गुरु साहिब कामरूप के लिए रवाना हुए। आज के गोलपाड़ा, कामरूप-रंगपुर और कच्छ बिहार के जिले कामरूप में गिने जाते थे। गुरु जी सबसे पहले ब्रह्मपुत्र नदी में नाव से धुबरी पहुँचे जो वर्तमान गोलपाड़ा जिले का एक विशेष नगर है। इस स्थान पर गुरु

तेगबहादुर साहिब ने मुस्लिम सैनिकों द्वारा खोदे गए टीले को बनवाया था। धुबरी से गुरु साहिब ब्रह्मपुत्र होते हुए गुवाहाटी पहुँचे, जिनका पुराना नाम प्रयाग ज्योतिष्पुर था।

सोलहवीं शताब्दी में, कामरूप के लोग तंत्र विद्या में पारंगत थे। भले ही मुसलमानों ने एक बार देवी कामाख्या के मंदिर को ध्वस्त कर दिया था, लेकिन उनकी आस्था में कोई अंतर नहीं था। कोच्चि जनजाति के लोग कामाख्या देवी की पूजा करते थे और देवी कामरूप को मानव बलि दी। गुरु साहिब गए और कामरूप के बाहर बैठ गए और मरदाने को अपनी भूख मिटाने के लिए कुछ लाने के लिए शहर भेजा। जब मरदाना किसी घर के सामने खड़ा हुआ, तो कुछ औरतें उसे घर के अंदर ले गई और तांत्रिक शिक्षा की सहायता से उनकी सोचने और बोलने की क्षमता समाप्त हो गई और उसे अपने पीछे की ओर चलने वाला मेमने बना लिया। विलायत वाली जन्मसाखी में यहाँ की रानी का नाम नूरशाह लिखा गया है लेकिन इस नाम की पुष्टि किसी अन्य जन्मसाखी या स्रोत से नहीं होती है।32 गुरु साहिब ने मरदाना की कुछ देर प्रतीक्षा की और पिफर उसकी तलाश में शहर चले गए, तो उन स्त्रियों ने उनका भी वही हाल बनाने की कोशिश की जो मरदाने की की थी। परन्तु उनकी एक न चली और वे गुरु नानकदेव जी के चरणों में गिर कर क्षमा मांगने लगी। गुरु साहिब ने उनकी गलती को क्षमा करते हुए मरदाने को पहले वाले रूप में लाकर मरदाने से कहा रबाब बजा और यह शब्द

गायाः

गुनवंती सहु राविया निर्गुण कूके काहे।

जे गुनवंती थी रहे तां भी सहु रावन जाई.33

इन महिलाओं ने सोचा कि शायद यह फकीर गीत सुनने में रुचि रखेगा और हमारे नृत्य प्रदर्शन से खुश होगा, लेकिन वे अपने उद्देश्य में सफल नहीं हुए और गुरु साहिब ने वचन कहा।

ताल मदीरे घट के घाट।

ढोलक दुनिया वझी वाज।34

इन महिलाओं ने सांसारिक पदार्थों की मदद से पिफर से गुरु जी को प्रसन्न करने की कोशिश की लेकिन उसका भी गुरुजी पर कोई प्रभाव नहीं देखा और उनके चरणों में आ गईं और गुरु जी उन्हें नाम जप करने की शिक्षा दे कर आगे निकल गए। प्राचार्य सतबीर सिंह जी बताते हैं कि आज गुरुद्वारा बरछा साहिब है। 'विचों मार कढियाँ

बुरियाइआं' का यह प्रत्यक्ष प्रमाण कहा जाता है।

बसते रहो, उजड़ जाओ:

सोलहवीं शताब्दी में, कामरूप की सीमा बरना नदी के पास समाप्त हो जाती थी और वर्तमान जिला दरंग से असम (आसा देशद्ध का क्षेत्र शुरू होता था। कामरूप पर उस समय कोच्चि और असम में अहोम राजाओं का शासन था। गुरुजी कामरूप से ब्रह्मपुत्र नदी के किनारे पूर्व की ओर चल दिए और रास्ते में कई स्थानों पर रुके। जब गुरु साहिब किसी शहर में गए तो वहाँ के लोग उनका मजाक उड़ाने लगे। गुरु ने कहा, फ्बसे रहोय्। अगले गाँव के लोगों ने बहुत बड़ी सेवा की, पिफर गुरु जी उन्हें 'ऊजड़ जाओ' कहकर आगे बढ़े, तब मरदाने

ने इस बात का रहस्य पूछा तो गुरु साहिब ने कहा कि इस शहर के लोग जहाँ भी जाएंगे, वहाँ के लोगों को अपने जैसा बना लेगें और पहले शहर वाले भी अपने जैसा बना लेंगे, इसलिये उन्हें 'बसे रहो' कहा गया है।

धनसारी वादीः

गुरु नानक देव जी ब्रहमपुत्र दरिया, गोलाघाट के शहर पहुँचे।

यह नगर धनसारी नदी के पूर्वी तट पर असम के वर्तमान पूर्वी भाग में सिब सागर जिले की एक तहसील है। गोलाघाट से लगी नदी की

घाटी को धनसारी वादी कहा जाता था क्योंकि यह धनसारी नदी के किनारे एक मैदानी इलाका था। धनसारी नदी नागा पर्वत से निकलती है और वर्तमान सिब सागर जिले की सीमा को नौगंग जिले से अलग करती हुई उत्तर-पश्चिम की तरफ होकर ब्रह्मपुत्र नदी में विलीन हो जाती है। साथ वर्तमान पार करते हुए बहुत अधिक है। धनसारी घाटी के उत्तर में नागा और शकिर पहाड़ियों से घिरे विस्तृत मैदान थे। उन पहाड़ों पर नागाओं का निवास था जिन्होंने मनुष्यों की बलि देते और मानव मांस खाया करते थे।35

जब गुरु साहिब धनसारी घाटी गए, तो एक दिन गुरु नानक साहिब और भाई मरदाने को नागाओं ने पकड़ लिया। उन्होंने देखा कि बाबा जी और मरदाना दुनिया से अलग होकर कीर्तन में लगे हुए हैं। जब उन्होंने उन्हें मारना शुरू किया, तो वे गुरु की दिव्य महिमा और आध्यात्मिक शतिफ से प्रभावित हुए। उन्होंने महसूस किया कि

यह इंसान आम इंसानों की तरह नहीं है। दिव्य वचन से प्रभावित होकर, उन्होंने गुरु जी और मरदाने को छोड़ दिया। गुरु साहिब उन्हें नाम का उपदेश देकर लौट गए। डा॔.तरलोचन सिंह लिखते हैं कि मरदाने को कौड़ा राक्षस ने पकड़ लिया था और एक पेड़ से बांध दिया था और भुनकर खाने वाला था तभी वहाँ गुरु नानक जी पहुँच गए। गुरु ने उन्हें उपदेश दिया कि आपको इंसानों को नहीं मारना चाहिए जबकि प्रकृति ने आपको खाने के लिए और भी बहुत कुछ दिया है। कोडे ने महसूस किया कि यह एक गंभीर पाप था। उन्होंने बाबा नानक से वादा किया कि वह पिफर कभी नरभक्षी नहीं बनेंगे।

'डा॔. मोहम्मद काजिम: असम का एक विवरणः एशियाई अनुसंधान' का हवाला देते हुए। 118. तरलोचन सिंह जी गुरु बाबा के प्रभाव के बारे में लिखते हैं कि फ्इस क्षेत्र में एक पर्वत श्रृंखला है, जिसके लोग खुद को 'नानक कबीला' कहते हैं, वे बहुत स्वतंत्र स्वभाव के हैं। वे राजा को कर नहीं देते और उसके अधिकांश आदेशों का

पालन करते हैं। हो सकता है कि गुरु नानक देव जी को कौड़ा इन पहाड़ियों पर मिले हों और उनके अनुयायी बाबा नानक के अनुयायी बन गए हों। गुरु नानक से मिलने के तुरंत बाद कौड़ा की मृत्यु हो गई थी।36

गुरु साहिब गोलाघाट से वापस गुवाहाटी ब्रह्मपुत्र नदी के रास्ते होते हुए पहुँचे और गुवाहाटी से एक पहाड़ी रास्ता मौजूदा शिलांग की तरफ जाता हैं। इस से आगे जोवाई से होकर, जयंती पूरे पहाड़ी रास्ते पर जहाँ केवल घोड़े और पुरुष ही चल सकते थेॠ सिलहट पहुँच गए। जयंती पुरा वर्तमान शिलांग से जोवाई तक 64 मील और जयंती पुरा से सिलहट 26 मील दूर था। ऐसा कहा जाता है कि पहले सिलहट में गुरु नानक की याद में एक गुरुद्वारा था। यह तारा सिंह निरोतम के फ्गुरु तीरथ संग्रहय् से स्पष्ट होता है। लेकिन लगता है कि यह गुरुद्वारा समय के साथ ढह गया क्योंकि आजकल यहाँ कोई गुरुद्वारा नहीं है।

सिलहट ब्रह्मपुत्र घाटी के दक्षिण की ओर सूरमा या बराक नदियों की घाटी में के बीच होने के कारण पूर्वी बंगाल के ज्यादा करीब था। 16वीं शताब्दी की शुरुआत में सिलहट पर मुसलमानों का कब्जा था। यहाँ एक पहुँचा हुआ फकीर शाह जलाल यहाँ रहता था और जिसका देहांत 1531 ईस्वी में हुआ। उनकी मस्जिद और मकबरा आज भी उनके खास स्मारक माने जाते हैं। हो सकता है शाह जलाल का गुरु जी से मेल हुआ हो।

सिलहट से वर्तमान कलकत्ता तक जाने वाले कई मार्ग थे। लेकिन सिलहट इलाके में आमतौर पर लोग नाव से ही सफर करते थे। तो गुरु साहिब सिलहट से पूर्व में सूरमा नदी तक और पिफर बराक नदी में ढाका के दक्षिण-पश्चिम में कई जगहों पर नाव से और कई जगहों पर पैदल चलकर उस सड़क तक पहुँचे जो वर्तमान कलकत्ता से गंजाम जाती थी। गंजाम उड़ीसा और दक्षिण का एक नगर था। इसी रास्ते से चलते हुए गुरु जी वह उड़ीसा की तत्कालीन राजधानी कटक पहुँचे।

उड़ीसा का सबसे प्रसिद्ध मंदिर जगन्नाथ था। इसलिए, उड़ीसा के राजा को राजा जगन्नाथ के रूप में सम्मानित किया जाता था। जब गुरु साहिब कटक पहुँचे, तो प्रतापरुद्र देव उड़ीसा के राजा थे। जो अपने पिता पुरुषोत्तमदेव की मृत्यु के बाद 1497 में गद्दी पर बैठा। प्रतापरुद्रदेव वैष्णव मत का अनुयायी था। जब उन्हें पता चला

कि उत्तर-पश्चिमी भारत से कोई महापुरुष आए हैं, और उनके साथ

एक रबाबी भी है। वह अपने घोड़े पर सवार होकर गुरु जी को मिलने आया। जो लोग गुरु के बगल में बैठे थे वे राजा को देखकर दूर चले गए और राजा ने दर्शन किए और प्रसन्न होकर गुरु जी से प्रश्न पूछा कि यह दुनिया क्या है, कुछ पता नहीं लगता कि कोई जीव किस तरह का है और कोई दूसरा किस तरफ का? बहुत सारे संत और कई चोर हैं। हम उनकी रचना से भगवान के रूप को कैसे समझें ? जवाब में, गुरु ने यह शब्द गाया।

एको सरवर कमल अनूप।। सदा बिगसे परमल रूप।। ऊजल मोती चुगहि हंस।। सर्ब कला जगदीसे अंस।।37

जब राजा ने इन शब्दों को सुना, तो वार्तालाप हुई, वह बहुत प्रभावित हुआ और अभिवादन करके सम्मानित किया और चला

गया। कटक, गुरु नानक की याद में एक प्राचीन गुरुद्वारा है। (यह साखीद्ध मेहरवान वाली जनमसाखी और गुरु नानक चमत्कार-भाई वीर सिंह से ली गई है।

जगन्नाथ पुरीः

कटक से पुरी तक की पुरानी सड़क को जगन्नाथ रोड भी कहा जाता था। गुरु ने कटक से इस सड़क पर प्रस्थान किया। इसी रास्ते पर उनकी मुलाकात पंडित कलजुग से हुई थी। जब उन्हें पता चला कि राजा ने गुरु जी का सम्मान किया है, तो वे गुरु को जीतने के लिए अपने तांत्रिक ज्ञान, धन और शत्तिफ के साथ पुरी से इस पुराने रास्ते पर आ गया। उसने पहले गुरु जी को डराने की कोशिश की। कई भयानक रूप थे, लेकिन गुरु अडिग रहे। जब उसकी एक न चली तो वह गुरु के पास आकर अपने धन का लालच देने लगा, और मोतियों के मंदिर और सुंदर महिलाओं के वादे से उन्हें बहकाने लगे। लेकिन गुरु अडिग रहे और मरदाने से कहा, रबाब बजाओ। उन्होंने इन शब्दों को गाया।

मोती त मंदर उसरही रतनी त होई जडाऊ। कस्तूरी कंगू अगरि चन्दनि लीपी आवे चाऊ। मत देख भूला वीसरै तेरा चिति न आवे नाऊ। हरी बिन जीऊ जलि बलि जाऊ।38

यह सुनकर कलजुग गुरु जी के चरणों में गिर पड़ा और गुरु जी उनसे बात करते हुए जगन्नाथ पुरी पहुँच गए।

पश्चिमी विद्वानों का मानना है कि यह एक बौद्धस्थल था और मध्ययुग में उड़ीसा के गंगा और सूरजवंश के राजाओं की मदद से इसने विष्णु के मंदिर का रूप ले लिया। कई लेखकों का मत है कि गुरुनानक यहाँ चेतनिया भगत से मिले थे और कुछ समय तक दोनों

एकसाथ कीर्तन करते रहे। समुद्र की लहरों, लहरदार हवा, आकाश में तारे और चंद्रमा के साथ गुरु नानक को पुरी का स्थान बहुत ही सुखद और प्यारा लगा। उन्हें ऐसा लग रहा था कि ये सभी दृश्य उस अकाल पुरख की आरती कर रहे हैं। एक दिन पंडों ने पूछा कि आप आरती के लिए खड़े क्यों नहीं हुए तो उन्होंने कहा कि सभी प्रकृति, तारे, चंद्रमा और सूर्य सभी उस परमात्मा की आरती कर रहे हैं। तो पंडड्ढा ने कहा कि आप जिस आरती की बात कर रहे हैं, वो आरती भी बता दें। तब गुरु जी ने यह आरती सुनायी।

गगन में थालु रवि चंदू दीपक बने तारिका मंडल जनक मोती। धूप मलआनलो पवण चवरो करे सगल बनराय फूलंत जोति। कैसी आरती होए भव खंडना तेरी आरती।

अनहता शब्द वाजंत भेरी।39

इस आरती को सुनकर पांडे बहुत प्रभावित हुए। यहाँ गुरु जी की याद में एक पुराना गुरुद्वारा है, जिसे बौउली साहिब कहा जाता है। यहाँ पुरी में, प्रतापरुद्र देव एक बार पिफर गुरु जी से मिलने आए और पूछा कि आपको यह नाम का उपहार कैसे मिला? गुरु ने इन शब्दों को गाया।

निधि सिद्धि निरमल नाम बीचार। पूरण पुरि रहिया बिखु मारि।। त्रिकुटी छुटी बिमल माझारी। गुर की मति जिए आई कारि।।40 राजा ने इन वचनों को सुना और प्रणाम किया और गुरु साहिब

यहाँ कुछ देर रुके और पिफर दक्षिण की ओर चल दिए।

गुंटूरः

जगन्नाथ पुरी से गुरु साहिब और मरदाना दक्षिण की ओर मुड़ गए। आप पुरी से कटक और कटक से गंजम आ गए। बंगाल से गंजाम तक एक पुरानी सड़क आती थी। गंजाम से आप दक्षिण की तरफ कांचीपुरम या मौजूदा कांजीवरम वाली सड़क पर चलते चलते उस स्थान पर पहुँचे जिसे आजकल गंटूर कहते हैं। यह आंध्र प्रदेश का एक प्रमुख शहर है। डाॅ.कृपाल सिंह के अनुसार, यह नगर मसूलीपट्टठम से 60 मील पश्चिम में और निकटवर्ती पहाड़ी से 6 मील पूर्व में है। यहाँ गुरु नानक देव जी की स्मृति में एक गुरुद्वारा भी है, जो उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में हैदराबाद के एक वजीर चंदू लाल ने बनवाया था। उस ने दक्षिण की ओर गुरु साहिब जी के चरण छोह प्राप्त करने वाले पाँच स्थानों पर उस ने गुरुद्वारे बनवाए थे। गुंटूर उनमें से एक था। इसकी सेवा उदासी साधु करते रहे हैं। कुछ समय यहाँ रहने के बाद गुरु जी ने प्रकृति के स्वरूप का आनंद लिया और पिफर दक्षिण की ओर चल पड़े।

कांचीपुरमः

गुंटूर से गुरु नानक साहिब मद्रास के दक्षिण में कांचीपुरम पहुँच गए। आज कल यह मद्रास से 45 मील दक्षिण पश्चिम में स्थित है। कांचीपुरम भारत के प्रसिद्ध तीर्थों में से एक है। यहाँ जैन मत के लोग बड़ी संख्या में रहते हैं। यह शहर पाल और चोल राजाओं की राजधानी रहा है। गुरु नानक साहिब के समकालीन राजा कृष्ण ने

यहाँ (1502द्ध दो मंदिरों का निर्माण कराया। गुरु नानकदेव जी की

याद में एक गुरुद्वारे है।

तिरुवनंतपुरमः

काचीपुरम से दक्षिण की ओर चलकर गुरु जी त्रिवणमलाई नगर पहुँचे। यह शहर अब दक्षिण अर्काट जिले में है। सोलहवीं शताब्दी में, यह दक्षिण में मुख्य सड़क और पश्चिम में पहाड़ी सड़कों पर था। आजकल चारों तरफ सड़कें हैं। त्रिवणमलाई का अर्थ है फ्पहाड़ों में प्रज्ज्वलित पवित्र अग्नि।य् कहा जाता है कि एक बार पार्वती ने शिव की आंखों पर हाथ रखा और पूरी दुनिया में अंधेरा छा गया। शिव पार्वती से बहुत क्रोधित हो गए और उन्हें दुनिया में भेज दिया। त्रिवणमलाई उन स्थानों में से एक था जहाँ उन्होंने तपस्या की थी। कुछ समय तक पार्वती ने यहाँ तपस्या की और पिफर शिव ने बगल की पहाड़ी पर एक ज्योति जलाई और पार्वती को संकेत दिया कि उनकी गलती क्षमा हो गई है। इस प्रकार प्रज्ज्वलित अग्नि जो पहाड़ी पर दिखाई दी,उसी के नाम पर त्रिवेंद्रम शहर, पहाड़ी की तलहटी में बस गया। यह एक बहुत पुराना शहर है और यहाँ शिव का एक सुंदर मंदिर है जो बहुत पुराना है, गुरु साहिब यहाँ कुछ समय के लिए रुके थे, और उनकी याद में एक गुरुद्वारा है। यह गुरुद्वारा भी चंदू लाल वजीर हैदराबाद द्वारा निर्मित गुरुद्वारों में से एक है। गुरु यहाँ कुछ देर रुके और पिफर दक्षिण की ओर चल पड़े।

लंका:

त्रिवेंद्रम से, गुरु नानक और मरदाना ने दक्षिण की ओर त्रिचनापल्ली की ओर प्रस्थान किया। त्रिचनापल्ली के पास तमिल

के आलवार वैष्णव संतों का सबसे प्रसिद्ध मंदिर श्री रंगम था। यह मंदिर कावेरी और कोलरौन नदियों के बीच स्थित है। श्री रंगम का अर्थ तमिल में दो नदियों के बीच स्थित होना भी है। दक्षिण भारत में वैष्णवों का यह सबसे बड़ा मंदिर था। यहीं पर भक्तिफ संप्रदाय के नेता रामानुज ने अपने जीवन के अंतिम वर्ष बिताए थे। इस मंदिर की सात परिक्रमाएँ हैं। गुरु साहिब कुछ समय के लिए यहाँ ठहरे थे और यहाँ एक गुरुद्वारा चंदू लाल ने बनवाया, पर यह आजकल दिखायी नहीं देता।

त्रिचनापाली से गुरु साहिब नाव से नागापट्टिठनम पहुँचे। यह लंका जाने के लिए दक्षिण भारत के सबसे पुराने बंदरगाहों में से एक था। यहीं से गुरु साहिब लंका गए। गुरु नानक साहिब नागापट्टिठनम से त्रिंकोमली और पिफर मटियाकुलम (नई बटिकुलाद्ध आए।

बटिकुला के राजा शिव के उपासक थे। जनम साखियों में इसका नाम शिवनाभ लिखा है। इसका मतलब है कि वह शिव के उपासक थे। उन्होंने मनसुख से गुरु नानक साहिब की स्तुति सुनी थी। मनसुख ने भगीरथ के साथ सुल्तानपुर में गुरु से मुलाकात की थी।

यहाँ वह कारोबार के सिलसिले में आया था और उसने राजा को गुरु नानक साहिब की महिमा बताई थी। जब राजा को पता चला कि

एक साधु उत्तर भारत से आया है, तो उसने सुंदर महिलाओं को परीक्षा के लिए भेजा। उन्होंने कई रंग दिखाए लेकिन बाबा को मोह नहीं पायी। गुरु साहिब अपने ध्यान में मग्न रहे।

तब इस राजा ने स्वयं आकर पूछा कि तुम कौन हो? आप जोगी हैं या पंडित? तब गुरु ने यह शब्द पढ़ा।

जोगी जुगति नाम निरमाइल ता के मैल न राती। प्रीतम नाथ सदा सच संगे जनम मरण गति बित।41

यह सुनकर राजा समझ गया कि जिस महापुरुष के विषय में मनसुख ने बताया था, वे ये ही हैं। राजा ने गुरु जी का अभिवादन किया और उन्हें अपने साथ महल में ले गया। कुछ समय राजा के पास रहकर, गुरु जी ने राजा से अनुमति लेकर बटिकुला से लगभग 12 मील दक्षिण में डेरे डाले। ये जगहें बहुत खूबसूरत थीं। यहीं पर गुरु जी ने ज्ञानी ज्ञान सिंह के अनुसार एक अच्छे भाट को सिख बनाया। जिस स्थान पर गुरु जी ठहरे थे, उस स्थान पर कुरुकल मंडप नामक नगर है। कुरुकुल एक तमिल शब्द है जिसका अर्थ है

'गुरु का नगर'। यहाँ के लोगो ने डा॔. कृपाल सिंह को बताया कि साढ़े चार सौ साल पहले यहाँ उत्तर भारत से एक सिद्ध बाबा यहाँ आए थे। उनकी याद में शहर बसा हुआ है।

लंका के राजा के साथ मिलन

कुरुकुल मंडप से, गुरु जी ने लंका के प्रसिद्ध तीर्थ स्थल करतारगामा की यात्र की, जो लंका के सुदूर दक्षिण पूर्व में स्थित है। भारतीय तीर्थयात्री गुरु साहिब से सदियों पहले इस स्थान पर आते थे। लंका के पूर्वी तट के बटिकुला से तीर्थयात्रियों ने करतारगामा की

यात्र की। तो गुरु जी वर्तमान कलमुनाई, तुकोइल, पाटुविल और पानम से गुजरते हुए मानक गंगा के तट पर प्रसिद्ध स्थान पर पहुँचे। ज्ञानी ज्ञान सिंह के अनुसार, गुरु साहिब करतरगामा या कार्तिक स्वामी के मंदिर से, बादुला नामक शहर में चले गए। वहाँ से वे नूरा अहिलिया के पहाड़ी इलाकों से गुजरे, जिन्हें सीता अहिलिया भी

कहा जाता है, और सीता वाका के माध्यम से कोटि राज पहुँचे। उस समय कोटि के नौवें राजा धर्म-प्रकर्मा बाहू शासन कर रहे थे। वह राजा गुरु जी के साथ चर्चा परिचर्चा से बहुत प्रभावित हुए।

कोटिराज में बौद्ध धर्म बहुत मजबूत था जो एक अनीश्वरवादी धर्म है। लेकिन गुरु नानक देव जी तो भगवान को अंग-संग मानते थे। गुरु जी ने उन्हें ईश्वरवाद का उपदेश दिया। जिससे राजा बहुत प्रभावित हुए। बौद्ध धर्म में, संघ-राजा बोद्धियों की सर्वा॓च्च स्थानीय उपाधि थी। जब उन्हें पता चला कि गुरु जी ने राजा को अपना अनुयायी बना लिया है, तो उन्होंने गुरु जी से चर्चा करने की कोशिश की। चूँकि गुरु का उपदेश मूर्तिपूजा और जाति के विरुद्ध था, इसलिए कुछ ब्राह्मण भी बौद्धों में शामिल हो गए। जब वे सभी कोटि के राजा के सामने चर्चा करने लगे, तो गुरु ने समझाया कि भगवान का नाम ही सभी को शांति देता है। गुरु ने यह शब्द गया:-

सतयुग सत सत बोलो। पोनाहारी मन नहीं डोले।

त्रोते जग भगत कमाई। जप तप संजम ताड़ी लायी।

द्वापर भागता पुन्न सतजुग त्रोता जुगा दुवापर पूजा चारे। कलजुग कीर्तन नाम आधारा।

तीने जग तीने दृढे कलि केवल नाम आधार।42

यह सुनकर राजा धर्म प्रकर्मा बाहू और अन्य सभी बहुत प्रभावित हुए। गुरु साहिब कुछ देर कोटि रुके और पिफर उत्तर की ओर चल पड़े।

उत्तर की ओर चलते हुए, गुरु साहिब सीतावाका पहुँचे, जिसे अब अविस्वेला कहा जाता है। यह कोलंबो से 33 मील उत्तर पूर्व में है। सीतावाका से गुरु साहिब अनराधपुरा पहुँचे। यह प्राचीन काल से श्रीलंका की राजधानी रही है। पिफर उत्तर में तालीमीनार बंदरगाह है। पास ही पहिला मैनर का बंदरगाह था। इब्न बतूता भी यहाँ आया और वहाँ के मुसलमानों से मिला था। इस क्षेत्र में पानी की भारी कमी थी, और तालाबों में बारिश के पानी को भर कर पूरे साल भर इस्तेमाल किया जाता था। गाँव की आबादी भी तालाब के पास ही थी। इस क्षेत्र में चलते चलते भाई मरदाने को बहुत प्यास लगी। गुरु जी ने एक तलाब मरदाने को पानी पिलाया और खुद भी पिया। वह पड़ोस की बस्ती से कुछ खाना भी लाया और गुरु और मरदाने दोनों ने खाया। इस प्रकार गुरु ने मरदाने की भूख और प्यास बुझाई.

सेतुबंध-रामेश्वरम:

लंका में गुरु साहिब और भाई मरदाना बादबानी जहाज में सवार होकर सेतुबंध पहुँचे। यह स्थान रामेश्वरम से 8-9 मील की दूरी पर है। कहा जाता है कि श्री राम जी ने लंका पर विजय प्राप्त करने के बाद यहाँ एक पुल का निर्माण किया था। गुरु साहिब सेतबंध से रामेश्वरम आए। गुरुद्वारा नानक उदासी मठ यहाँ गुरु साहिब के आगमन की स्मृति में है। रामेश्वरम का मंदिर पामबन द्वीप के उत्तर पूर्व की ओर है। इसका आंतरिक भाग काले पत्थर से बना है जो लंका से लाया गया था। फग्र्यूसन के अनुसार रामेश्वरम का मंदिर उतना बड़ा नहीं था जितना अब है। इसका अधिकांश भाग सोलहवीं से सत्राहवीं शताब्दी में बनाया गया था। गुरु साहिब ने रामेश्वरम के पास गोरख पंथी जोगिया से चर्चा की।

जब आप मंदिर जा रहे थे तो किसी ने कहा कि आप निरंकार

के भक्तफ हैं और यहाँ क्यों जाते हैं। गुरु ने शब्द कहेः

दूजी माया जगत चित वासु। काम, क्रोध और अहंकार

बिनास।

दूजा काऊन कहा नहीं कोई। सभ महि एक निरंजन सोई.43

यह सुनकर जोगी चुप हो गए और गुरु साहिब कुछ देर के लिए रामेश्वरम ठहर कर उत्तर की ओर चल दिए। रामेश्वरम से गुरु साहिब और मरदाना रामनादपुरम और त्रिवनमलाये से होते हुए वर्तमान त्रिवेंद्रम पहुँचे। उस समय त्रिवेंद्रम समुद्र से थोड़ी दूरी पर था और तिरुअनंतपुरम के नाम से प्रसिद्ध नगर था। यहाँ श्री अनंता पद्यनाभा स्वामी का एक पुराना मंदिर था। तिरुअनंतपुरम के नाम से, धीरे-धीरे इसका नाम त्रिवेंद्रम पड़ गया। त्रिवेंद्रम के पास, उत्तर पश्चिम में, दो छोटे शहर, पालम और कोट्टôायम थे। यहाँ गुरु नानक साहिब आकर बैठे थे। यहाँ जोगियों का डेरा था, इस पर चर्चा करते हुए गुरु साहिब ने जोगियों को बांट कर खाने का निर्देश दिया। जोगिया ने आपको एक तिल दिया और कहा, फ्इसे बांटकर दिखाओ।य् गुरु साहिब ने मरदाने से कुड़ी में कूटकर और पानी मिलाने को कहा और सब को बांट दिया। इस जगह को तिलगंजी साहिब कहा जाता है। यहाँ एक गुरुद्वारा है और उदासी संत सेवा करते हैं।

कौड़ा राक्षस से मिलनः

पालम कोट्टðायम से गुरु ने उत्तर की ओर वर्तमान कोयम्बतूर जिले के दक्षिण में अन्नामलाई पहाड़ियों के पास आ गये, यह पर्वत पश्चिमी घाट के पहाड़ों का हिस्सा थे। इन्हें हाथी पर्वत भी कहा जाता है। इन पहाड़ों की ढलानों पर कादन नाम के जंगली लोग सदियों से बसे हुए हैं। ये लोग पहाड़ों की घाटियों में रहते थे और जंगली उपज पर रहते थे। बाकी जंगली जनजातियों की तरह, वे बाहरी व्यत्तिफ को मार डालते थे। इन कादान जंगली लोगों के लिए ही ऐसा लगता है कि कौड़ा लिखा गया है। जब गुरु अन्नामलाई पर्वत पर आए, तो एक कादीन ने मरदाने को पकड़ लिया और उसे मारने लगे। उसी समय गुरु जी वहाँ पहुँच गए। गुरु के मुख से तेज टपकता देख कादान चकित रह गया। गुरु जी ने मरदाने को रिहा कर करवाया और उसे अपने साथ ले कर उत्तर की ओर चल दिए। कहा जाता है कि यह कादान भी गुरु का शिष्य बन गया।

बीदरः

गुरु नानक मालाबार के नीलगिरि पर्वत से होते हुए बीदर नगर पहुँचे। यहाँ कभी बांस का जंगल हुआ करता था। जंगल काट दिया गया और वारंगल काकतीय राजाओं ने महादेव का मंदिर बनवाया। इसके चारों ओर बसे हुए नगर का नाम बीदर था। बीदर बहमनी साम्राज्य की राजधानी भी थी। बहमनी राजाओं के मकबरे बीदर के उत्तर, पूर्व और पश्चिम दिशा में मिलते थे। गुरु नानक साहिब बीदर के इस जंगल में रहे। इस क्षेत्र में दो मुस्लिम फकीर जलाउद्दीन और सैयद याकूब अली रहते थे। जब उन्हें गुरु साहिब के बारे में पता चला तो वे गुरु जी के दर्शन करने आए। गुरु जी कुछ समय यह रहे और यह शब्द उच्चरित किया:

मुसलमाना सिफति शरियत पढ़ी पढ़ी करहि बीचार।

बंदे से जि पवहि विचि बंदी वेखन कऊ दीदार।44

जलालुद्दीन और याकूबली दोनों की कब्रें अभी भी मौजूद हैं। इन कब्रों के पास मीठे पानी का एक चश्मा बहता है, जो गुरु नानक के समय की याद दिलाता है। इसे नानक झीरा कहा जाता है। यह शहर पहले हैदराबाद राज्य में था और अब कर्नाटक राज्य में है।

नांदेड़ः

नांदेड़ शहर बीदर से 117 मील उत्तर में था। गुरु साहिब नांदेड़ पहुँचे और शहर से तीन मील बाहर बैठ गए। जहाँ आजकल गुरुद्वारा माल टिकरी है। यहाँ एक फकीर सयत शाह हुसैन रहता था। गुरु जी कुछ देर उसके साथ रहे और पिफर उत्तर की ओर चले गए। उस फकीर शाह हुसैन का लकड़ी का मकबरा गुरुद्वारे के पीछे बना है।

नर्मदा नदी के किनारे:

नांदेड़ से चलकर, गुरु साहिब देवगिरि जिसे आज दोलाताबाद कहते हैं यहाँ से होते हुए नर्मदा के किनारे पर पहुँचे जहाँ नर्मदा अरब सागर में मिलती है। इस शहर का नाम बरोच नगर था। जो अब रेलवे स्टेशन बरोच के पास है यहाँ गुरु जी को एक संन्यासी मिला, और उसने गुरु जी से पूछा कि जो मन ईश्वर से दूर है वह परमेश्वर को कैसे प्राप्त कर सकता है। गुरु साहिब ने वचन कहाः-

ना मन मरे ना कारज होई. मन वसि दूता दुरमति दोई। मन मानें गुर ते इक होई.45

यह वचन सुनकर तपस्वी ने गुरु का अभिवादन किया। गुरु साहिब कुछ समय के लिए यहाँ ठहरे। नानकवाडी गुरु नानक साहिब के सबसे पुराने स्मारकों में से एक है। 18वीं शताब्दी में, जब अंग्रेजों ने इस क्षेत्र का बंदोबस्त किया, तो उन्होंने गुरुद्वारे का नाम 75 रुपये प्रति वर्ष की जागीर शुरू की, जो आज भी जारी है। कुछ देर यहाँ रहने के बाद गुरु आगे बढ़े।

गिरनार पर्वत (सोरठि देशद्धः

गुरु नानक साहिब बरोच से एक नाव पर सवार हुए और मौजूदा वैरावल बंदरगाह के पास तत्कालीन बंदरगाह प्रभास के पास पहुँचे। प्रभास बंदरगाह के पास सोमनाथ का एक मंदिर भी था। आप सोमनाथ मंदिर से 50 मील दूर गिरनार पर्वत पर पहुँचे। गिरनार पर्वत जूनागढ़ से 10 मील दूर है। जूनागढ़ क्षेत्र का पुराना नाम सोरठ था। सौराष्ट्र सोरठ का दूसरा नाम था। जिस समय गुरु नानकदेव जी सोरठ देश गए उस समय सोरठ पर मुजफ्फर द्वितीय (1511 से 1526 ईस्वीद्ध का शासन था।

गुरु नानक देव जी ने मरदाने को रबाब और सोरठ राग गाने के लिए कहा और उन्होंने ये शब्द गाएः-

सोरठि सदा सुहावणी जे सचा मनि होई. दंदी मैल न कतु मनि जीभै सचा सोई.46

;जूनागढ़द्ध गिरनार पर्वतः

गुरु नानक साहिब के समय जूनागढ़ के पास गिरनार पहाड़ी गोरख पंथ जोगियों के लिए एक प्रसिद्ध स्थान था। जोगी परंपरा के अनुसार, गुरु दत्तात्रोय मच्छेन्द्रनाथ के गुरु थे। उन्होंने मच्छेन्द्रनाथ को

दीक्षा दी मच्छेन्द्रनाथ ने गोरख नाथ को। दत्तात्रोय का स्थान गिरनार पर्वत की एक ऊँची चोटी पर था। गिरनार पर्वत की पाँच चोटियाँ थीं जिनके वर्तमान नाम हैंः अम्बा माता, गोरख नाथ, उग्र शिखर, गुरु दत्तात्रोय और कालका जी। इन चोटियों के रास्ते में जैन मंदिर भी आते थे। अम्बा माता का मंदिर वास्तव में जैनियों का मंदिर है। इस पर्वत पर सभी मतों और संप्रदायों के संत रहते थे। आज गिरनार पर्वत पर तीन कुण्ड हैं। गोरख मुखी कुंड, हनुमान धारा और कमण्डल कुंड। जब गुरु नानकदेव जी गिरनार पर्वत पर गए, तो सिद्धों ने गुरु नानक से पानी मांगा। तब गुरु नानकदेव जी ने कमण्डल उठा कर फेंका, और वहन कमण्डल कुण्ड बन गया। लेकिन जूना गढ़ में आजकल गुरु नानक देव जी का कोई स्मारक नहीं है। नानक संप्रदाय का मत है, कि, जहाँ आजकल देवी दुर्गा का मंदिर है, वहाँ नानक शाही गुरुद्वारा हुआ करता था, जहाँ सुथरे शाही संत रहते थे और जो यह स्थान एक गृहस्थ को बेच कर चले गए। गुरु जी कुछ समय के लिए गिरनार में रहे और पिफर उत्तर की ओर चल पड़े।

उज्जैन:

जूनागढ़ से गुरु जी और भाई मरदाना ने पहले उत्तर और पिफर पूर्व की यात्र की और अहमदाबाद होते हुए उज्जैन पहुँचे। पश्चिमी तट से व्यापारी अहमदाबाद और उज्जैन आते जाते रहते थे, क्योंकि दोनों बड़े व्यापारिक केंद्र थे।

भर्तृहरि हरि की गुफा सपरा नदी (अवंती नदीद्ध के तट पर थी। भर्तृहरि हरि की गुफा के पास एक मुस्लिम मस्जिद भी थी, जिसके सामने एक इमली का पेड़ था। इसी पेड़ के पास गुरु साहिब ने डेरा डाला था। इस गुफा के पास एक हरा-भरा रहता था। जब उन्होंने भाई मरदाना और गुरु नानक को कीर्तन करते हुए देखा, तो वे बहुत प्रभावित हुए और उन्होंने आकर गुरु जी से पूछा कि यहाँ आने वाले कितने योगी मोक्ष प्राप्त करेंगे।

आध्यात्मिक करम करे ता साचा। मुत्तिफ भेदू किया जाने कच्चा।

ऐसी जोगी जुगाती बिचाराई, पंच मारी साचु उरी धारै।

जिस के अंतरि साचु वसावै, जोग जुगति की कीमति पावै।47 इन शब्दों को सुनकर भर्तृहरि के मन की अनेक शंकाएँ दूर हो

गईं और अन्य अनेक विषयों पर विचार-विमर्श हुआ। एक दिन भर्तृहरि ने पिफर पूछा। आपका ज्ञान मार्ग क्या है? आप किस स्नान को सबसे ज्यादा महत्त्व देते हैं? आप किसका सिमरन करते हैं? इसी तरह कई अन्य विषयों पर भी खुली चर्चा हुई और भर्तृहरि बहुत प्रभावित हुए। कुछ समय के लिए गुरु जी भर्तृहरि के साथ रहे और पिफर आगे उत्तर की ओर बढ़े।

मथुराः

उज्जैन से गुरु साहिब और भाई मरदाना चितौड़ और अजमेर होते हुए मथुरा पहुँचे। रास्ते में अजमेर के पास पुष्कर झील में गुरु नानक देव का एक पुराना गुरुद्वारा हुआ करता था। यह डाॅ. कृपाल सिंह जी का मानना हैं, लेकिन आजकल वहाँ कोई गुरुद्वारा नहीं है। विदेशियों के शासनकाल के दौरान, मथुरा को विष्णु मत का ज्ञान केंद्र माना जाता था जिसके पश्चिमी क्षेत्र को बृजभूमि कहा जाता

था, क्योंकि इसमें श्री कृष्ण जी महाराज के जन्मस्थान और उनके जीवन के अन्य पहलुओं से संबंधित कई स्मारक शामिल थे। दिल्ली से इसकी निकटता के कारण, यह विदेशी सम्राटों के प्रति पक्षपात और द्वेष का प्रतीक बना रहा। महमूद गजनवी ने सबसे पहले मथुरा के मंदिर को तोड़ा था। सम्राट सिकंदर लोधी (1488-1517द्ध ने भी मथुरा में कई मंदिरों को तोड़ा था।

गुरु नानक साहिब मथुरा में केशव देव के एक मंदिर में जाकर ठहरे। जब इस मंदिर में गुरु साहिब विराजमान थे, तो उनके पास कई भत्तफ आकर बैठ गए और बात करते हुए भत्तफों ने पूछा, फ्यदि आपने भगवान को पाया है, तो आपने उन्हें किस सेवा से पाया है?य् तो आपने इसका उत्तर दिया-

सहिज मिलै मिलिआ परवाण, ना तिस मरण ना आवण जाण। ठाकुर महि दास दस महि सोई। जह देखा तह अवर ना कोई। गुरमुखि भगति सहज घर पाईए।

बिन गुर भेटे मरि आइये जाइए।48

एक बार वैष्णव मत के लोग गुरु जी के पास आए और उनसे पूछा कि आपका पंथ कौन सा है? अनुपालन क्या है? और क्या उपदेश है? पिफर आपने यह शबद गायाः

अपने ठाकुर की हऊ चेरी।

चरनि गहे जगजीवन प्रभ के हऊमै मार निबेरी। रहाऊ पूरन परम जोति परमेसर प्रीतम प्राण हमारे।।9

उन वैष्णवों ने शब्द सुनने के बाद, गुरु साहिब को नमस्कार किया और गुरु साहिब कुछ समय के लिए मथुरा में रहे और पिफर दिल्ली के लिए रवाना हो गए।

दिल्ली में उपदेशः

मथुरा से चलकर गुरु साहिब और भाई मरदाना दिल्ली पहुँचे। दिल्ली के बाहर शाही रास्ते पर एक पेड़ के नीचे, गुरुओं ने डेरा डाला और मधुर स्वर में कीर्तन शुरू कर दिया। कीर्तन से प्रभावित होकर बगल के बगीचे के मालिक ने उन्हें बगीचे में रहने को कहा। गुरु जी मान गए, गुरु नानकदेव जी और भाई मरदाना प्रतिदिन बगीचे में कीर्तन करने लगे, और संगतें जुड़नी शुरू हो गई। गुरु साहिब ने प्यासों के लिए वहाँ एक कुआं खुदवाया ताकि हर प्यासे को पानी मिल सके। जो पैसा लोग चढाते थे उस पैसे का लंगर लगा दिया जाता था। यह व्यवस्था इतनी अच्छी थी कि कोई भी यात्री भूखा-प्यासा नहीं रहता था। बगीचे के मालिक ने यह बाग गुरु नानक देव जी की धर्मशाला बना दी। इसी स्थान पर गुरुद्वारा नानक पियाउ है। डाॅ. त्रिलोचन सिंह लिखते हैं कि इसका पहला नाम पियाउ साहब था। यहाँ गुरु साहिब ने एक अभिमानी तपस्वी के अभिमान को ज्ञान-चर्चा के माध्यम से तोड़ा था।

दिल्ली में एक फकीर मजनू रहता था। गुरु जी ने इसकी मेहनत की बात सुनकर, यमुना के किनारे एक टीले परजहाँ उसकी झोपडी थी उस का दरवाजा खटखटाया। मजनू गुरु जी के दर्शन करके निहाल हो गया। उसके भीतर उस नूर की ज्वाला जग उठी जिसकी

खोज और दर्शन के लिए वह दीवाना हो गया था। उसने गुरु नानक

देव जी को अपना पीर मानकर उस निवास स्थान को गुरु नानक देव जी का स्थान बना दिया। इस जगह को मजनू का टीला कहा जाता है और यहाँ एक खूबसूरत गुरुद्वारा साहिब बनाया गया है। बाद में गुरु हर गोबिंद सिंह जी और बाबा राम राय जी इस स्थान पर ठहरे थे।

दिल्ली से कई अन्य संत-भक्तफ, सूफी फकीर गुरु के साथ यहाँ विचार-चर्चा करने के लिए आए और गुरु जी का बहुत मान-सम्मान किया। जन्मसाखियों के संदर्भ में डाॅ. कृपाल सिंह जी और प्रधानाचार्य सतबीर सिंह जी दिल्ली आने के विषय में पूर्व से दक्षिण की यात्र की वापसी से मानते हैंऋ जबकि डाॅ.त्रिलोचन सिंह पूर्व की ओर प्रस्थान करने से पहले गुरु साहिब के दिल्ली आने के बारे में लिखते हैं।

पानीपत:

गुरु नानकदेव जी और भाई मरदाना ने दिल्ली से पानीपत की ओर कूच किया, जो शेर शाह सूरी मार्ग के शहर पर स्थित है। पानीपत में एक प्रसिद्ध फकीर, बुआली कलंदर शेख शरफौद-दीन रहता था, जिसे शाह शरफ भी कहा जाता था। 1325 ई.में उनकी मृत्यु हो गई। उनका मकबरा पानीपत में था। गुरु साहिब के समय

यह दरगाह सूफी फकीरों का प्रमुख केंद्र था। शेख इदल कबीर उस समय शाह शरफ की दरगाह पर विराजमान थे। उन्हें महान कार्य करने वाला एक फकीर माना जाता था। इसके कई नाम थे और शेख ताहिर भी उनमें से एक था। अरबी में तहर का मतलब पवित्र होता है। जनम सखियों में इसे शेख तातिहार लिखा जाता है। शेख तहर और उसके अनुयायी गुरु साहिब के दर्शन करने आए और कुछ समय बाद पूछने लगे कि सफा (साफद्धदिल दरवेश कैसा होता है? और उसका व्यवहार कैसा होता है? इसके जवाब में, गुरु साहिब ने

यह शबद गायाः

जीवत मरै जागत फन सोवे। जानत आप मूसावै।

सफल सफा होई मिले खालक कऊ तऊ दरवेसु कहावै। तेरा जन है को ऐसा दिली दरवेस।

सादी गमी तमक नाही गुसा खुदी हिरस नहीं एस।50

शेख ताहिर इन शब्दों को सुनकर प्रसन्न हुआ और गुरु जी का अभिवादन किया। गुरु साहिब यहाँ कुछ देर रुके और पिफर आगे चले दिए।

वापस सुल्तानपुर लौटना:

पानीपत से गुरु साहिब और मरदाना पहले थानेसर से होते हुए वर्तमान सगरूर से होते हुए तहसील मोगा जिला पिफरोजपुर के तख्तूपुरा थाना निहाल सिंघवाला गाँव पहुँचे। गुरु साहिब की याद में

एक ऐतिहासिक गुरुद्वारा भी है। तख्तपुरा से सतलुज को पार करते हुए गुरु जी सुल्तानपुर पहुँचे। सुल्तानपुर आप जी बहन नानकी और फूफा जय राम जी से मिले। इतने सालों बाद भाई जी से मिल कर बहन नानकी बहुत भावुक हो गईं लेकिन गुरु साहिब तो मोह-माया से अलग थे। बहन अपने भाई से मिल कर बहुत खुश हुई।

पट्टठी के जमींदारों को उपदेशः

सुल्तानपुर से गुरु जी मौजूदा पट्टठी हैबत खां पहुँचे। आपने यहाँ

के जमींदारों को जोतते देखकर पूछा कि आप जो खेती करते हैं और करवाते हैं उसका क्या परिणाम होगा? जमींदार ने अहंकार में कहा कि इससे हम आप जैसे संत को खाना खिलाते हैं, परिवार पालते हैं, रिश्तेदारों के साथ व्यवहार करते हैं। इस तरह यह किसानी होती है। हमारी आजीविका का मुख्य साधन है। गुरु साहिब ने जमींदार का उत्तर ध्यान से सुना और कहा, आत्मा की मुत्तिफ के लिए आप क्या करते हैं? वह एक और तरह की किसानी होती है जिसके साथ आत्मा प्रफुल्लित होती है। तब किसानों ने कहा कृपया हमें भी बतायें

ऋतो गुरु जी ने ये शब्द पढ़ेः-

इह तन धरती बीज करमा करो सलिल आपाऊ सारिंगपाणी। मन किरसाण हरि हृदय जमाई लै इहु पावसि पद निरबाणी। काहे गरबसि मूडे माइआ।51

यह सुनकर जमींदारों ने गुरु जी को प्रणाम किया और उनके चरणों में पड़े। गुरु साहिब पट्टठी से आगे पश्चिम की ओर चल दिए।

तलवंडी:

पट्टठी से गुरु नानक देव जी और मरदाना खालडे और पिफर

घविंडी नगर होते हुए तलवंडी पहुँचे। खालड़े और घविंडी में भी गुरु नानकदेव जी की याद में गुरुद्वारे भी बने हुए हैं। इस प्रकार पूरब और दक्षिण की उदासी (प्रचार-यात्राद्धको लगभग 12 वर्ष लगे और 12 साल बाद तलवंडी पहुँचे। मरदाने को बहुत उत्साह था कि तलवंडी में परिवार और अपने सभी रिश्तेदारों से मिलेगा। तलवंडी में वे सभी से मिले और प्रसन्न हुए। गुरु नानकदेव जी भी अपने माता-

पिता से मिले। माता तृप्ता बहुत व्याकुल थी। वे अपने पुत्र को देखकर प्रसन्न हुई और उन्हें अनेक आशीर्वाद दिए। कुछ महीने तलवंडी में रहने के बाद, गुरु साहिब उस आदमी को अपने साथ ले गए और सुमेर पर्वत की यात्र पर निकल पड़े।

सन्दर्भः

1.भाई गुरदास, वार पहली, पऊडी 24

2. वही

3.गु.ग्र. पृ. 662

4.गु.ग्र. पृ. 991

5.किरपाल सिंह, जनमसाखी परंपरा : ऐतिहासिक दृष्टिकोण से, न। 9

6. गु.ग्र. पृ. 729

7.देखें, वही, पृ. 729

8. गु.ग्र. पृ. 1291

9. गु.ग्र. पृ. 794

10.गु.ग्र. पृ. 729

11. त्रिलोचन सिंह, जीवन चरित्र, गुरु नानकदेव, पृ. 11

12. गु.ग्र. पृ. 124

13. गु.ग्र. पृ. 1289

14. गु.ग्र. पृ. 1289

15. गु.ग्र. पृ. 730

16. गु.ग्र. पृ. 730

17. गु.ग्र. पृ. 730

18. गु.ग्र. पृ. 1127

19. गु.ग्र. पृ. 957

20. गु.ग्र. पृ. 634

21. गु.ग्र. पृ. 1171

22. गु.ग्र. पृ. 467

23. गु.ग्र. पृ. 472

24. गु.ग्र. पृ. 472

25. गु.ग्र. पृ. 661

26. गु.ग्र. पृ. 358

27. त्रिलोचन सिंह, वही, पृ. 155

28. किरपाल सिंह, वही, पृष्ठ, 59

29. गु.ग्र. पृ. 416

30. त्रिलोचन सिंह, वही, पृष्ठ, 158

31. प्रिंसिपल, सतबीर सिंह, पृ. 98

32. किरपाल सिंह, वही, पृ. 12

33. गु.ग्र. पृ. 557

34. गु.ग्र. पृ. 349

35. किरपाल सिंह, वही, पृ. 65

36. त्रिलोचन सिंह, वही, पृ. 173

37. गु.ग्र. पृ. 352

38. गु.ग्र. पृ. 14

39. गु.ग्र. पृ. 663

40. गु.ग्र. पृ. 220

41. गु.ग्र. पृ. 992

42. किरपाल सिंह, वही, पृ. 81 (यह शब्द गुरु ग्रन्थ साहिब में नहीं है)

43. गु.ग्र. पृ. 223

44. गु.ग्र. पृ. 465

45. गु.ग्र. पु. 222

46. गु.ग्र. पृ. 642

47. गु.ग्र. पृ. 223

48. गु.ग्र. पृ. 686

49. गु.ग्र. पृ. 1197

50. किरपाल सिंह, वही, पृ. 88

51. गु.ग्र. पृ. 23

(हिंदी अनुवाद डॉ. शोभा कौर)